तृतीय अध्याय

मृणाल पाण्डे : साहित्य सृजन

3.1 मृणाल पाण्डे : साहित्यिक अवदान

3.2 मृणाल पाण्डे के पारिवारिक संस्कार एवं शिक्षा

3.3 मृणाल पाण्डे पत्रकार के रूप में

3.3.1 संपादकीय यात्रा

3.3.2 दूरदर्शन एवं आकाशवाणी की यात्रा

3.4 मृणाल पाण्डे की विशिष्ट उपलब्धियाँ एवं पुरस्कार

3.5 मृणाल पाण्डे के कथा–साहित्य का अध्ययन एवं विश्लेषण

3.6 समकालीन परिदृश्य एवं मृणाल पाण्डे

तृतीय अध्याय

मृणाल पाण्डे : साहित्य सृजन

साहित्यकार की सर्जना एवं उसके द्वारा रचित साहित्य के मूल तथ्य को जानने, समझने एवं परखने के लिए यह आवश्यक है कि उसके व्यक्तित्व से भली–भाँति परिचित हुआ जाए। रचनाकार का संपूर्ण व्यक्तित्व रचना में ही अभिव्यक्त होता है। उसकी अनुभूति, कल्पना, धारणा, विचार, संकल्प–विकल्प, द्वन्द्व, स्वभाव आदि प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप में उसकी रचनाओं में यत्र–तत्र प्रतिफलित हुआ करते हैं। लेखक के व्यक्तित्व का सृजन से वही सम्बन्ध होता है जो चन्द्रमा का अपनी रश्मियों से तथा पुष्प का सुगन्ध से। लेखन की सार्थकता लेखक के व्यक्तित्व में प्रमुख भूमिका निभाती है।

लेखकीय व्यक्तित्व के सम्यक् विश्लेषण के अभाव में उसके सृजन के प्रति न्याय संभव नहीं है। अतः इसी प्रयोजन से प्रस्तावित अध्याय में मृणाल पाण्डे के विविधोन्मुखी व्यक्तित्व एवं सृजनात्मकता को समझने का सार्थक प्रयास किया जा रहा है।

हिन्दी–साहित्य में महिला साहित्यकारों की उपस्थिति कोई नई बात नहीं है। महिलाओं ने हिन्दी–साहित्य ही नहीं अपितु भारतीय साहित्य के उत्स से ही प्रेरक और सर्जक की भूमिका निभाते हुए अपनी भाव–प्रवण प्रतिभा का परिचय दिया है। इसी परम्परा और विरासत पर फलित हिन्दी साहित्य का इतिहास महिलाओं की संवेदनात्मक सृजनशीलता की सहयात्रा का साक्षी रहा है। यह दूसरी बात है कि आज महिलाओं की भागीदारी साहित्य के अतिरिक्त अन्य सभी क्षेत्रों में भी बढ़ गयी है। इससे यह भ्रम टूटा है कि नारी होने मात्र से उसे किसी कार्य–विशेष को करने से रोका नहीं जा सकता। स्वयं महिलाओं ने अपने सामर्थ्य को पहचाना है। इसी आत्मसजगता एवं व्यक्तित्व की खोज में स्त्री रचनाकारों की बड़ी जमात सामने आई है। मृणाल पाण्डे भी महिला रचनाकारों में विशिष्ट स्थान पर उपस्थित है।

26 फरवरी सन् 1946 को टीकमगढ़, मध्यप्रदेश की भूमि पर जन्मी मृणाल पाण्डे किसी परिचय की मोहताज नहीं है। उनकी माँ 'शिवानी गौरापंत' हिन्दी

साहित्य जगत् की प्रख्यात लेखिका तथा पिता शिक्षा अधिकारी थे। मृणाल पाण्डे को अपने माता–पिता की प्रेरणा तथा प्रोत्साहन सदैव प्राप्त हुआ। इनकी नानी लीलावती पाण्डे भी संस्कृत, हिन्दी तथा गुजराती साहित्य की विदुषी एवं निष्पक्ष तथा सफल आलोचक थीं। मृणाल पाण्डे का समस्त परिवार विद्या एवं साहित्य का उपासक था। घर में भी साहित्य प्रेमियों का आना–जाना लगा रहता था, इस पारिवारिक परिवेश का ही प्रभाव था कि मृणाल पाण्डे का जुड़ाव साहित्य एवं समाज से हो गया, फलतः उनके व्यक्तित्व ने एक महान् हस्ती का रूप धारण कर लिया।

मृणाल पाण्डे का विवाह अरविन्द पाण्डे से हुआ जो एक प्रशासनिक अधिकारी थे। इनकी दो बेटियाँ हैं जो अमरीका में रह रही हैं, मृणाल पाण्डे ने अपनी पुस्तक 'जहाँ औरतें गढ़ी जाती हैं' में अपनी बेटियों के विषय में लिखा है, "आज खुद मेरी दोनों बेटियाँ भी सात समन्दर पार अपने जीवन की डोर खुद थामकर स्वयं सिद्धा बन चुकी हैं। दोनों ने बेहद मेहनत से खुद अपने लिए अपना शोध–क्षेत्र चुना है।"[1] मृणाल पाण्डे स्वयं संस्कार सम्पन्न महिला हैं उन्होंने इन्हीं संस्कारों को अपनी बेटियों में भी संचारित करने का प्रयास किया है।

मृणाल पाण्डे अन्तर्मुखी, अल्पभाषी, संवेदनशील, सुशील एवं हिन्दी, अंग्रेजी भाषा की प्रगाढ़ ज्ञाता हैं। उनके साक्षात्कार एवं लेखों से स्पष्टतः झलकता है कि वे जैसी भीतर से हैं, वैसी ही बाहर से हैं। उनके व्यक्तित्व में कृत्रिमता लेशमात्र भी नहीं है। आरम्भ से ही स्वतंत्र विचारधारा की ओर उन्मुख रही हैं। उन्होंने अपने व्यक्तित्व का निर्माण स्वयं किया है तथा पूरी क्षमता के साथ जीवन मार्ग की बाधाओं को चुनौती देती हुई निरन्तर आगे बढ़ी हैं। उच्च पदों पर आसीन तथा चर्चित लेखिका होने के बावजूद उनमें कहीं भी दम्भ का पुट दिखाई नहीं देता है। मृणाल पाण्डे का शालीन व्यक्तित्व अपनी माँ से बेहद प्रभावित रहा है, जिसके कारण वह अत्यन्त मेधावी, तटस्थ एवं खरी गहन अन्तर्दृष्टि को प्राप्त कर विलक्षण लेखिका बन सकी, मृणाल पाण्डे के विचारानुसार, "एक स्त्री का व्यक्तित्व और कृतित्व (चाहे उसकी सन्तान हो या अन्य रचनात्मक कार्य) जितनी गहराई से अपनी

---

1 पाण्डे, मृणाल, जहाँ औरतें गढ़ी जाती हैं, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा० लि०, नई दिल्ली, सन्–2006, पृ०सं०–44

माँ से प्रभावित होता है, उतना किसी अन्य पात्र या ऐतिहासिक घटनाक्रम से नहीं।"[1] लेखिका की धमनियों में साहित्यिक रक्त प्रवाहित करने का श्रेय उनकी माँ को प्राप्त है। उन्होंने ही समाज में प्रचलित दकियानूसी विचारों के विरुद्ध एक सुरक्षा देकर मृणाल पाण्डे के लिए रचना–संसार का मार्ग प्रशस्त किया। लेखिका ने स्वयं स्वीकार किया है, "बाहरी प्रभावों में मेरे लेखन पर मेरी माँ का गहरा असर पड़ा है। शिवानी के रूप में जब उन्होंने लिखना शुरू किया, मैं छह–सातेक साल की रही होऊँगी। तब से उनकी मैं भारी प्रशंसक हूँ और आलोचक भी। हमारे लेखन के गहरे अंतर्विरोधों और हमारे नज़रिये में कतई फ़र्क होने के बावजूद मुझमें और मेरे लेखन में जो कसक, विद्रोह, कायरता, सहिष्णुता, दुःख और सुख है, मूलरूप से मुझे उन्हीं से मिला है, उसका संवर्धन मेरे अंदर चाहे जिस रूप में हो।"[2] अपनी माँ की प्रेरणास्वरूप मृणाल पाण्डे ने रचनाकर्म की ओर बढ़ते हुए अपने लेखकीय जीवन का आरम्भ 21 वर्ष की आयु में 'कोहरा और मछलियाँ' कहानी की रचना से किया, जो सन् 1967 में धर्मवीर भारती द्वारा संपादित पत्रिका 'धर्मयुग' में प्रकाशित हुई थी।

सामाजिक तड़क–भड़क एवं ताम–झाम से दूर एकाकीपन को पसंद करने वाली मृणाल पाण्डे तथा उनकी माँ ने अदम्य साहस द्वारा रूढ़िवादी पारम्परिक पुरुष प्रधान समाज में स्वयं को स्थापित किया। उन्होंने स्त्री–विषयक लेखन कार्य के कारण पारिवारिक उपेक्षा को भी झेला है, मृणाल पाण्डे के अनुसार "हम परिवार की ऐसी दो बुजुर्ग महिलाएँ हैं, जिनके नाम का बाहर रुआब डालने को परिवारजन इस्तेमाल भले करें, पर खुद अपने बच्चों से उनका मेल–जोल बढ़वाना वे उचित नहीं मानते। पर यह बात भी कुछ ही अंशों में सच है। इसी स्थिति का एक पहलू यह भी है कि आज वे सब यह भी स्वीकार करते हैं कि हम दोनों माँ–बेटियों ने जोखिम मोल लेकर अपनी ही हिम्मत से परम्परा द्वारा स्त्री –वर्जित क्षेत्र में अपनी सफल पैठ बनाई है।"[3] यह उनके व्यक्तित्व का विराट् रूप है जिसने हाशिये पर धकेली गयी नारी–जाति की सामाजिक स्थिति का केवल शाब्दिक अंकन कर

---

1 पाण्डे, मृणाल, जहाँ औरतें गढ़ी जाती हैं, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा० लि०, नई दिल्ली, सन्–2006, पृ०सं०–57

2 उद्धृत, सुमन, कुमार सुमन, कहानी और कहानीकार, सूर्य–प्रकाशन, दिल्ली, सन्–1989, पृ०सं०–155

3 पाण्डे, मृणाल, जहाँ औरतें गढ़ी जाती हैं, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा० लि०, नई दिल्ली, सन्–2006, पृ०सं०–46

इतिश्री नहीं की अपितु परिस्थितियों के विरुद्ध स्त्री–संघर्ष की भावना को अपनी कृतियों के साथ–साथ निजी जीवन में स्थान देकर एक उदाहरण भी भारतीय समाज के सम्मुख प्रस्तुत किया है।

लेखिका के व्यक्तित्व में समकालीन परिस्थितियों से जूझने, प्रचंडता से टकराने का साहस तथा दृढ़, आत्मविश्वास भी उनकी माँ द्वारा ही प्रदत्त है। संभवतः यही अडिग विश्वास था जिसके द्वारा उन्होंने अपनी महत्त्वाकांक्षाओ को विस्तार देते हुए पत्रकारिता जैसा चुनौतीपूर्ण व्यवसाय चुना। यद्यपि शिवानी जी इस चयन से सहमत नहीं थीं, क्योंकि इससे उन्हें अपनी बेटी के पारिवारिक एवं रचनात्मक व्यक्तित्व को क्षति की आशंका थी, इस संदर्भ में स्वीकारोक्ति के प्रमाण स्वरूप शिवानी जी द्वारा लेखिका को दिये गये उलाहने का उल्लेख करना भी प्रासंगिक होगा, "तेरे स्वभाव में भी मेरी ही तरह एक अकड़ है। याद रखना एक तो ये और दूसरे तेरा सम्पादकी का काम, दोनों मिलकर अन्त तक तुझे भी मेरे जैसा इकलाखोरा बना सकते हैं। अभी भी वक्त है, अपने मन की अपने तक ही रखना सीख ले।"[1] परन्तु मृणाल पाण्डे की दृढ़ इच्छाशक्ति ने समय के साथ इस आशंका को निर्मूल सिद्ध कर दिया और समस्त व्यस्तताओं के बीच भी अपने दायित्व का निर्वाह करते हुए अपने रचनात्मक संसार से बराबर संपर्क रखा तथा अपनी माँ के समकक्ष ही साहित्यिक प्रतिष्ठा अर्जित की। एक सिद्धहस्त लेखिका होने के साथ उन्होंने हिन्दी पत्रकारिता एवं टी०वी० पत्रकारिता के क्षेत्र में अग्रणीय स्थान प्राप्त किया।

मृणाल पाण्डे एक सत्यान्वेषी कृतिकार हैं, उन्होंने वर्तमान जीवन और जगत् के यथार्थ को अपनी रचनाओं में निरूपित ही नहीं किया है, वरन् समस्त विषमता, पीड़ा, तनाव और विष को अपने भीतर शिव के समान पचाकर इस प्रकार रखा है कि उनके साहित्य में आशा के फूटते स्वर, जीवन के प्रति अनुराग, घनी संवेदना और मनुष्य के अस्तित्व को प्रभावित करने वाली परम् शुद्ध निष्ठा दिखाई देती है। प्रत्येक रचना में लेखिका स्वयं समाहित है, उनका मानना है, "इसके परे मैं कुछ भी नहीं हूँ, न बहू, न बेटी, न पत्नी, न माँ, न मित्र सिर्फ एक लेखिका हूँ, जिसकी

---

1 पाण्डे, मृणाल, जहाँ औरतें गढ़ी जाती हैं, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा० लि०, नई दिल्ली, सन्–2006, पृ०सं०–41

पहली शर्त है सच बोलना।"[1] उनका जीवन को देखने का नजरिया बहुविध है तथा विचारों में तीखेपन की तीव्रता है। अपने व्यक्तित्व की भाँति उनके लेखन में भी कहीं दुराव–छिपाव नहीं है। उनकी रचनाओं में व्यक्त सरोकार केवल रचना की आवश्यकता पूर्ति हेतु नहीं उठते बल्कि वे अपने सांगोपांग प्रगटीकरण के अतिरिक्त समाधान का मार्ग भी खोजते हैं। उन्होंने अपने लेखन द्वारा विशाल विश्व को समझा है, "एक बार जब अक्षरों की दुनिया से मेरा परिचय बन गया तो धीमे–धीमे मैंने पाया कि कैसे इसी वाक् की सहायता से मेरी ही जैसी लाखों–करोड़ों लड़कियों–औरतों ने खौफनाक चुप्पी से भी अज्ञान की उस हवालात में मुक्ति पाई होगी, कि कैसे देवियों का नाम–स्मरण एक सिरे से स्वतः अपने तमाम पर्वतों, नदियों, झीलों और सागरों का भी स्मरण करना बनता चला जाता है और कैसे ये सब शब्द हमें एक कुतुबनुमा डिबिया की तरह दिशा बोध देते रहते हैं।"[2]

मृणाल पाण्डे के कथाकार के पास एक अन्तर्दृष्टि अद्यतन रही है। इसीलिए उनके लेखन में उच्च कोटि की शालीनता, मर्यादा एवं संयम है। उन्होंने अपनी सहज तथा सपाट भाषा में, अपनी कृतियों द्वारा यह ध्वनित किया है कि उनका परिचय उनका पुरुषार्थ ही है।

मृणाल पाण्डे का जीवन दर्शन एक विशाल सागर की भाँति अनन्त और गहरा है। आकाश में बिखरे तारों के समान उनका व्यक्तित्व उनकी रचनाओं, लेखों में बिखरा पड़ा है। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि जीवन की परिस्थितियों में अनन्त नाटकीय संभावनाओं की खोज करने वाली लेखिका, पैनी दृष्टि की आलोचिका, ज्ञान–गरिमा से समृद्ध अध्यापिका, विभिन्न पदों पर कार्य करने वाली कुशल प्रशासिका, जीवन के ऐश्वर्य में पगी पर भीतर कहीं तटस्थ एवं निरपेक्ष–से व्यक्तित्व की धनी हैं – मृणाल पाण्डे। उन्हें कलम विरासत में अपनी माँ से मिली थी, जिसे माँजकर अपनी मौलिक प्रतिभा द्वारा सशक्त पहचान स्वयं बनायी, यही उनके व्यक्तित्व का शाश्वत् रूप है। समग्रतः लगन एवं निष्ठा के साथ श्रम की त्रिवेणी का आभास उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व में स्पष्टतः झलकता है।

---

1 उद्धृत, वर्मा, शीलप्रभा, महिला उपन्यासकारों की रचनाओं में बदलते सामाजिक संदर्भ, विद्या विहार प्रकाशन, कानपुर, सन्–1987, पृ०सं०–46

2 पाण्डे मृणाल, देवी : समयातीत गाथाएँ स्त्रियों की, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा० लि०, नई दिल्ली, सन्–1999, पृ०सं०–XIX, प्रस्तावना से उद्धृत

3.1 मृणाल पाण्डे : साहित्यिक अवदान

मृणाल पाण्डे ने कथा–साहित्य की रचना के साथ कथेतर गद्य–साहित्य में भी समसामयिक लेखन कार्य किया है। अतः लेखिका के कृतित्व प्रस्तुतिकरण को निम्नलिखित रूप से वर्गीकृत किया जा सकता है–

– कथा साहित्य (उपन्यास, कहानी)

– कथेतर गद्य–साहित्य (नाटक, निबंध, स्त्री–विषयक पुस्तकें, लेख, अंग्रेजी तथा संपादित पुस्तकें)

उपन्यास

- विरुद्ध (1977)
- पटरंगपुर पुराण (1983)
- देवी : समयातीत गाथाएँ स्त्रियों की (1999)
- रास्तों पर भटकते हुए (2000)
- हमका दियो परदेस (2001)
- अपनी गवाही (2003)

कहानी–संग्रह

- दरम्यान (1978)
- शब्दवेधी (1980)
- एक नीच ट्रैजेडी (1981)
- एक स्त्री का विदागीत (1985)
- यानी कि एक बात थी (1990)
- बचुली चौकीदारिन की कढ़ी (1990)
- चार दिन की जवानी तेरी (1995)

'दरम्यान', 'शब्दवेधी' तथा 'एक नीच ट्रैजेड़ी' कहानी–संग्रह में संकलित समस्त कहानियाँ तथा सन् 1990 तक मृणाल पाण्डे द्वारा लिखित कहानियों को दो

कहानी–संग्रहों 'यानी कि एक बात थी' तथा 'बचुली चौकीदारिन की कढ़ी' में प्रकाशित किया गया है।

कथेतर गद्य–साहित्य

नाटक

- आदमी जो मछुआरा नहीं था (1974)
- मौजूदा हालात को देखते हुए (1979)
- जो राम रचि राखा (1980)
- काजर की कोठरी (1984)

(बाबू देवकी नंदन खत्री के उपन्यास 'काजर की कोठरी' का नाट्य रूपांतरण)

- चोर निकल के भागा (1995)
- शर्मा जी की मुक्ति कथा (2002)

रेडियो नाटक

- अपनों का जंगल
- सुपरमैन की वापसी
- एक सच बैसाखियों वाला
- धीरे–धीरे रे मना

स्त्री–विषयक निबंध तथा स्त्री–लेख आधारित पुस्तकें

- स्त्री : देह की राजनीति से देश की राजनीति तक (1987)
- परिधि पर स्त्री (1996)
- ओ उब्बीरी .....भारतीय स्त्री का प्रजनन और यौन–जीवन (2003)
- जहाँ औरतें गढ़ी जाती हैं (2006)
- स्त्री : लम्बा सफर (2012)
- ध्वनियों के आलोक में स्त्री (2015)

अंग्रेजी भाषा में रचित कथेतर गद्य–साहित्य

- द सब्जेक्ट इज वूमन
  (The subject is women)

- स्टेपिंग आउट : लाइफ एण्ड सैक्सुअलिटी इन रूरल इण्डिया (2003)
  (Stepping out : An Overview of women in rural India and their reproductive heatlh)
- 1857 : द रियल स्टोरी ऑफ एन अपराइजिंग (2011)
  (1857 : The real story of an uprising)

अंग्रेजी उपन्यास

- द डॉटर्स डॉटर (1994)
  (The daughter's Daughter)
- देवी : टेल्स ऑफ वूमन इन ऑवर टाइम्स (1996)
  (Devi : Tales of women in our times)
- माय ऑउन विटनेस (1998)
  (May own witness)

संपादित पुस्तकें

- बंद गलियों के विरुद्ध (2001)
- बोलता लिहाफ (2007)

3.2 मृणाल पाण्डे के पारिवारिक संस्कार एवं शिक्षा

रचनाकार के व्यक्तित्व निर्माण में उसकी शिक्षा, पारिवारिक परिवेश, संस्कार, मान्यताएँ, आस्थाएँ, रुचियाँ–अरुचियाँ भी उत्तरदायी होती हैं। अत्यंत शिक्षित एवं प्रतिष्ठित परिवार में जन्मी मृणाल पाण्डे का बाल्यकाल स्वाभाविक प्रकृति सम्पन्न कुमायूँ–गढ़वाल के पहाड़ी क्षेत्र में व्यतीत हुआ, फलस्वरूप उनका बौद्धिक एवं मानसिक विकास एक रमणीय एवं स्वस्थ वातावरण में हुआ। बचपन से ही कथा–कहानियों में रुचि रखने वाली मृणाल अपनी माँ शिवानी द्वारा रचित बाल–कहानियों, पौराणिक कथाओं को पढ़ती थी तथा नानी से उन्हें सुनती भी थी। पारिवारिक वातावरण धार्मिक था, "जब मैं अपने अंतर्मुखी बचपन के दौरान अकसर घर के बड़े–बूढ़े से लेकर बच्चों के गिरोह तक के साथ अपने लगातार चल रहे अघोषित युद्धों से जूझती हुई अकसर रात को सपनों में चीख मारकर आसपास सोयों को जगा देती थी, तो माँ ने ही मुझे सोने से पहले रोज मार्कण्डेय पुराण के देवी–कवच का पाठ करना सिखाया था। मुझे बताया गया कि हाथ–पैर धोकर और

कुल्ला कर पहले मैं उन श्लोकों का पाठ करूँ और फिर नीचे दिये गये उसके हिन्दी भावार्थ को समझूँ और फिर उस पाठ की पुस्तक को तकिये के नीचे रखकर टप्प से सो जाऊँ।"[1] लेखिका का परिवार भारतीय संस्कृति का उपासक था। यहीं से उन्हें सांस्कृतिक अनुष्ठानों के विविध विधानों का ज्ञान प्राप्त हुआ तथा उनकी सांस्कृतिक चेतना की दृष्टि विकसित हुई। घर में पूजा–पाठ, शादी–ब्याह, पर्व–त्योहार, हर जगह उन्हें नेतृत्व प्राप्त था, यही कारण रहा कि वे आज भी जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अग्रणीय हैं, चाहे वह लेखन का क्षेत्र हो अथवा पत्राकारिता का। उनमें आत्मविश्वास कूट–कूट कर भरा हुआ है। परिवेश प्रदत्त प्रेरणा एवं संस्कार भले कितने ही सूक्ष्म क्यों न हों, वे सदैव उनसे प्रभावित हुईं तथा उनके भविष्य निर्धारण में भी इनकी मुख्य भूमिका रही, "नवदुर्गा, दस भैरवियाँ, षोडश मातृकाएँ, असंख्य ग्रामदेवियाँ– इन सबका स्मरण करना अपने चारों ओर फैली अनगिनत राहों का संधान कर लेना है। एक बिंदु वह भी आता है जब इन तमाम गाथाओं के विराट् दिक्–काल में मनों का एक–दूसरे को टोहकर परस्पर विलय हो जाता है। और, उस घड़ी इन कालातीत गाथाओं के महोदधि में हमें अपने समय के बिंब स्पष्ट झलकते दीखते हैं। .....यही सब विचार और अहसास थे जिन्होंने कालांतर में मुझे लेखिका से पत्रकार बनने की प्रेरणा दी।"[2]

आर्थिक सम्पन्नता के कारण मृणाल पाण्डे का बचपन सुख–सुविधा तथा वैभव में व्यतीत हुआ। मातृसत्तात्मक परिवार में लेखिका का जीवन अभावों से परे था। माँ शिवानी कुशलतापूर्वक गृहस्थी के समस्त क्रिया–कलाप लेखन के माध्यम से पूर्ण करती थी, "माँ शिवानी की हर रचना की किश्त ज्यों ही पूरी होती वह स–समारोह रजिस्टर्ड पोस्ट से मुंबई या दिल्ली पढ़ायी जाती और आने से पूर्व ही उसकी एवजी में आने वाले चैक की राशि का आवंटन घर की विविधि घरेलू मदों में हो चुका होता। हमारी स्कूल यूनीफार्में हों या गर्मियों की फीस, किसी नौकर की नवविवाहिता के लिये नथ गढ़ाई के देने हों या किसी पारिवारिक विवाह के लिये

---

1 पाण्डे, मृणाल, देवी : समयातीत गाथाएँ स्त्रियों की, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा० लि०, नई दिल्ली, सन्–1999, पृ०सं०–XIX, प्रस्तावना से उद्धृत

2 यथावत्, पृ०सं०–XIX, प्रस्तावना से उद्धृत

उपहार खरीदना हो शिवानी जी की स्वर्णप्रसू लेखनी सबके लिए चुपचाप प्रबंध करती रहती थी।"[1]

संस्कार व्यक्ति के व्यक्तित्व को ऐसा रूप प्रदान करते हैं जिससे उसे और अधिक स्वच्छ, पवित्र, निर्मल तथा उपयोगी बनाया जा सकता है। मृणाल के व्यक्तित्व को तेजस्वी एवं प्रभावशाली बनाने में उनकी माँ का विशेष योगदान है। उन्होंने समाज और उसकी मान्यताओं से उन्हें भली–भाँति परिचित करवाया, "एक रचनाधर्मी माँ का जीवन परंपरा से लगभग मुक्त होता है इसीलिए वे अपनी बेटियों को भी ग्लानि और परंपरा के पथरायेपन से मुक्त कर पाती है और एक बुद्धिमती, संवेदनशील बेटी जल्दी ही देख पाती है कि मानवीय रिश्तों और सामाजिक व्यवहार को लेकर माँ उसे जो आचरण संहिता पालन करने को दे रही है, खुद उसका निजी जीवन और लेखन उसका उल्लंघन कैसे करता है। माँ तथा पिता का दाम्पत्य जीवन और उसके विविध पहलू, माँ की रचनाओं में से सुनाई देती स्वायत्तता की अ–स्त्रियोचित ध्वनियाँ और माँ के सामाजिकता से सार्वजनिक और वैयक्तिक रिश्तों की भिन्नता सब ज्यों–ज्यों पुत्री के आगे स्पष्ट होते हैं, वह स्त्रीत्व के नये कोण, नयी गहराइयाँ देख पाती है। यह मेरा निजी अनुभव है।"[2] शिवानी जी ने अपने बच्चों को स्नेह–बंधन में बाँधकर रखा, प्रेरणास्वरूप उनके प्रत्येक क्षेत्र में उपस्थित रही हैं। उनके विराट् व्यक्तित्व के विषय में लेखिका ने लिखा है, "माँ हमें एक साथ बाँधती और विचलित करती है। शायद यही माँ महाकाली का बीज स्वरूप है। वह महाकाली, जो काल, स्थान, परिवार सबके परे निरंतर विचरण करती, निरंतर हमारी चेतना के क्षितिज पर अपनी स्याह उपस्थिति में झलकती रहती है।"[3]

यद्यपि मृणाल पाण्डे का पारिवारिक परिवेश पारंपरिक रूढ़िवादी था, परंतु मां ने परंपरागत बंधनों को तोड़कर अपनी बेटियों को चूल्हे–चौके से निकालकर संगीत, कला एवं साहित्य से जोड़ने का प्रयास किया, "तो माँ लिखती रही और रेड़ियो पाठ

---

1 पाण्डे, मृणाल, कादम्बिनी (संपादकीय आलेख), हिन्दुस्तान मीडिया वेंचर्स लिमिटेड, नोयड़ा, जून–2003, पृ०सं०–9

2 पाण्डे, मृणाल, जहाँ औरतें गढ़ी जाती हैं, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली, सन्–2006, पृ०सं० 55–56

3 यथावत्, पृ०सं०–44

भी करती रही। और उसके माध्यम से हमारा रिश्ता बड़ी सहजता से उस समय के बेहतरीन रचनात्मक साहित्य–संगीत से होता गया, भले ही घर के लोगों में इस कलावादिता से लड़कियों के बिगड़ने या 'चीप' बनने की आशंका पर जोरों से खुसुर–पुसुर होती रहती। यह माँ का ही जहूरा था कि हम, उसकी बेटियाँ घरेलू तर्ज की सिलाई–बुनाई सीखने की बजाए अपना समय पढ़ाई–लिखाई, संगीत और साहित्य की साधना में बिता सकीं।"[1] लेखिका को संगीत एवं कला से अत्यधिक प्रेम था। उसके प्रति समर्पण भाव था, उनकी माँ का झुकाव भी इसी ओर ही था, फलतः पूरा पारिवारिक परिवेश ही साहित्यिक विचारों एवं संगीत–प्रेम से भरा हुआ था। बाल्यकाल से ही प्राप्त स्वस्थ परिवेश ने मृणाल पाण्डे के व्यक्तित्व को समुचित आकार एवं संतुलन प्रदान किया। विपाशा पत्रिका में प्रकाशित साक्षात्कार में मृणाल पाण्डे ने स्वीकार किया है, "मेरे मन में कभी इस बात को लेकर दुविधा नहीं थी कि मुझे किस क्षेत्र में काम करना है। इतना जरूर था कि संवेदनशीलता कला के प्रति थी और मेरी माँ से मुझे संस्कार भी मिले थे। संगीत का उन्हें अब भी शौक है। बचपन में हमने बहुत स्तरीय शास्त्रीय संगीत सुना है। हमारे घर में जिस तरह से अच्छी कहानी पर चर्चा होती थी, उसी तरह से 'म्यूजिक कांसर्ट' पर भी चर्चा होती थी, संगीत और चित्रकला के विषय में उनकी सहज रुचि थी। ....मैंने पढ़ाई खत्म करने से पहले एक शब्द नहीं लिखा। कॉलेज की मैगजीन तक में नहीं लिखा। छोटी थी तो जरूर अपनी क्लास के बच्चों के लिए 'कार्टून स्ट्रिप' बनाया करती थी। भाई–बहनों के लिए कहानियाँ लिखा करती थी। घर में ही हम लोग एक अखबार निकालते थे। जहाँ तक चित्रकला और संगीत का सवाल है, फैसिनेशन मुझे शुरू से ही था। आगरा घराने की 'दीपाली नाग' से संगीत सीखा, पर संगीत मुझे आंतरिक आनन्द देता है। मैंने जिन्दगी में मात्र अपने लिए शायद कोई काम नहीं किया पर संगीत–साधना सिर्फ अपने लिए करती हूँ, तब मैं न फोन सुनती हूँ, न बच्चों से बात करती हूँ..... न घर में देखती हूँ कि क्या हो रहा है, क्या पक रहा है, कौन आया, कौन गया। वह मुझे इतना सुख देता है, जितना 'रिलेक्स' करता है कि मुझे लगता है कि उसका उद्देश्य मेरे लिए कम से कम यही है कि मैं किसी

---

1 पाण्डे, मृणाल, देवी : समयातीत गाथाएँ स्त्रियों की, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली, सन्–1999, पृ०सं०–XVIII, प्रस्तावना से उद्धृत

राग को अच्छी तरह गा पाऊँ... गाकर दूसरों को रिझाने या अभिभूत करने की इच्छा नहीं होती। लिखने की बात दूसरी है। बिना पाठकों का खयाल आये रहना मुश्किल है वहाँ।"[1] संगीत के साथ लगाव ने ही कालांतर में लेखिका को शास्त्रीय संगीत पर शोध के लिए प्रेरित किया, उसी का ही परिणाम है उनकी लिखी पुस्तक 'ध्वनियों के आलोक में स्त्री'। नारी हृदय होने के कारण लेखिका ने इस पुस्तक में स्पष्ट किया है कि गुणी महिला संगीतज्ञों ने भले कितनी शोहरत और धन की प्राप्ति अपनी कला द्वारा प्राप्त की, परन्तु एक स्तर पर उनकी अवहेलना और आलोचना भी कम नहीं हुई है। वास्तव में, पुरुष प्रधान समाज की भेदभावपूर्ण दृष्टि का शिकार अधिकतर महिला संगीतज्ञ भी हुईं हैं। यह पुस्तक अलक्षित स्त्री संगीतज्ञों को उभारती है जिनके अवदान का समुचित उल्लेख होना अब तक किंचित शेष रहा है।

कट्टर सनातनी परिवार में सुशिक्षित, संस्कारशील माँ शिवानी ने अपनी बेटियों के जीवन को संयमित, मर्यादित, अनुशासित एवं नियमित बनाने का सदैव प्रयत्न किया। वे समाज में स्त्री की दोयम दर्जे वाली स्थिति, पीड़ा कुण्ठा से परिचित थीं, इसीलिए उन्होंने अपनी पुत्रियों को भी समुचित दिशा निर्देशन दिया। मृणाल पाण्डे के अनुसार, "मुझे जहाँ तक याद पड़ता है, माँ की हमारे पठन–पाठन को लेकर व्यग्रता और उत्सुक निगरानी हमें अकसर उकताहट या चिड़चिड़ाहट से भर देती थी। लेकिन आज हम बहनें उसके उस दुर्लभ उपहार की ही मार्फत अपने व्यक्तित्व में देवत्व के उसी अग्नि–स्फुल्लिंग का स्पर्श महसूस करती हैं।"[2]

माँ बच्चे की प्रथम शिक्षिका होती है। मृणाल पाण्डे ने अपनी प्रथम शिक्षिका से ही एक अच्छे साहित्यकार के गुण संस्कार विरासत स्वरूप प्राप्त किये। लेखिका अपनी माँ शिवानी की भाँति स्वतन्त्र, तटस्थ एवं स्पष्ट विचारों से पूर्ण है। उन्होंने अपने परिवेश, परिस्थिति तथा संघर्ष से गहन अनुभूति प्राप्त करते हुए अपना एक जीवन–दर्शन बनाया है, जिसे उनके लेखन में भी स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। उन्होंने स्वयं इसे प्रमाण स्वरूप इन शब्दों में व्यक्त किया है, "अपनी माँ की ही

---

1 जोशी, श्रीनिवास (संपा०), विपाशा (पत्रिका), भाषा एवं संस्कृति विभाग, शिमला, हिमाचल प्रदेश, मार्च–अप्रैल, सन्–1985, प्रथम अंक, पृ०सं० 28–30

2 पाण्डे, मृणाल, देवी : समयातीत गाथाएँ स्त्रियों की, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली, सन्–1999, पृ०सं०–XVIII, प्रस्तावना से उद्धृत

तरह इस सबके बावजूद मेरा अस्तित्व नष्ट नहीं हुआ, उसी तरह जैसे अरेबियन नाइट्स की कथावाचिका शहरज़ाद का नहीं हुआ था।"[1]

3.2.1 शिक्षा

मृणाल पाण्डे ने अपनी प्रारम्भिक शिक्षा नैनीताल में पूर्ण की। उच्च शिक्षा के अन्तर्गत उन्होंने सन् 1964 में इलाहाबाद विश्वविद्यालय से स्नातक तथा सन् 1966 में अंग्रेजी साहित्य में स्नातकोत्तर की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। सन् 1972–74 में उन्होंने 'कारकोरन स्कूल ऑफ आर्ट' वाशिंगटन (अमरीका) में चित्रकला, डिजाइन, कला, वास्तुकला एवं प्राचीन पुरातत्व के इतिहास का गहन अध्ययन किया। सन् 1979 में गंधर्व महाविद्यालय से शास्त्रीय संगीत में 'संगीत विशारद' का विधिवत् अध्ययन दीपालीनाग तथा श्री बसंत ठाकरे के निर्देशन में किया। कालांतर में उन्होंने 'हिन्दी पारसी रंगमंच' तथा संगीत विषय पर शोध–कार्य भी किया।

3.3 मृणाल पाण्डे पत्रकार के रूप में

मृणाल पाण्डे लेखक, पत्रकार एवं भारतीय टेलीविजन की जानी–मानी हस्ती हैं। हिन्दी पत्रकारिता एवं टी०वी० पत्रकारिता के क्षेत्र में वह एक आधार स्तम्भ मानी जाती हैं। अपनी महत्त्वाकांक्षाओं के कारण पारम्परिक दायरों को तोड़ने का साहस उन्होंने किया और पत्रकारिता के चुनौतीपूर्ण तथा महिलाओं के लिए लगभग वर्जित क्षेत्र में न केवल प्रवेश किया वरन् अपने मनोबल एवं संघर्ष की प्रवृत्ति से वहाँ अपना सम्मानजनक स्थान भी बना लिया। एक पत्रकार के रूप में मृणाल पाण्डे ने जिस दायित्व का निर्वाह किया है, वह किसी बंद कमरे की सोच नहीं है। उन्होंने व्यवस्था को देखा है तथा समाज के बीच में जाकर कार्य किया है। उनके बेबाक एवं सामयिक संपादकीय लेख लोक–चिन्तन को निरन्तर प्रेरित करते हैं।

आरम्भ में मृणाल पाण्डे 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' की कार्यकारी सम्पादक रहीं, साथ ही 'वामा' महिला पत्रिका का सम्पादन किया। उन्होंने 'वामा' पत्रिका को

---

1 पाण्डे, मृणाल, देवी : समयातीत गाथाएँ स्त्रियों की, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली, सन्–1999, पृ०सं०–XX, प्रस्तावना से उद्धृत

परम्परागत महिला पत्रिकाओं से हटकर सामान्य सरोकारों से जोड़ा, महिलाओं से जुड़े प्रश्नों को 'महिला कल्याण' की कोटि से निकालकर 'महिला विकास' का नाम दिया। पृष्ठ पाँच और छह पर दिए जाने वाले महिला स्तम्भों से हटाकर महिलाओं के प्रश्नों को मुख्य पृष्ठों पर लानें लगीं। दहेज हत्याएँ, बलात्कार, वेश्यावृत्ति, महिला साक्षरता, महिला बेरोजगारी, बालिकाओं का असमान स्तर, महिला मज़दूरों का शोषण आदि अब केवल महिला–मुद्दे नहीं हैं, अब ये मुद्दे पूरे समाज की सामान्य सोच के मुद्दे बन चुके हैं। वामा पत्रिका के प्रकाशित करने के उद्देश्य सम्बन्धी विचार को अभिव्यक्त करते हुए मृणाल पाण्डे ने लिखा है, "मैं मूलतः स्वप्नदर्शी हूँ, मैं यह नहीं कह रही हूँ कि मैं एक बहुत अच्छी पत्रिका निकाल रही हूँ..... मैं यह कहूँगी कि हाँ यह मेरा सपना है कि एक बहुत अच्छी पत्रिका निकाल सकूँ। यह एक बेकार का कलंक है कि हिन्दी में अच्छी पत्रिका निकल नहीं सकती। मैं चाहती हूँ कि भले ही पत्रिका में कहीं मेरा नाम न हो, पर यह कलंक न लगे कि हिन्दी में अच्छी पत्रिका नहीं निकल सकती। जहाँ तक रचनाओं के बारे में सवाल है, एक लेखक में इतनी विनयशीलता होनी ही चाहिए कि जिस तरह का वह लिख रहा है, वही सम्पूर्ण है, यह वह न सोचे। मुझे लगता है कि इस पत्रिका की सार्थकता इसी में है कि स्त्रियों को अपने बारे में सोचने का समय मिले। अपने बारे में कहने का मौका मिले। जहाँ तक व्यावसायिक होने का सवाल है व्यावसायिक मेरा क्षेत्र है ही नहीं..... ।"[1]

मृणाल पाण्डे अपनी लगन, ईमानदारी और उत्साह से इस पेशे से जुड़ी। उन्होंने पुरुष पत्रकारों से कंधे से कंधा मिलाकर कार्य किया तथा अपने अथक् प्रयास से इस क्षेत्र में अपनी विशेष छवि बनाई। मृणाल पाण्डे ने स्वयं माना है, "स्वीकारणीय होने के लिए महिला पत्रकारों को अपने पुरुष सहकर्मियों से दो गुना अधिक काम करके दिखाना पड़ता है।"[2] हिन्दुस्तान टाइम्स पत्र समूह एक ऐसा संस्थान है जहाँ मृणाल पाण्डे ने लम्बे समय तक कार्य किया तथा ऊँचा पद भी

---

1 जोशी, श्रीनिवास (संपा०), विपाशा (पत्रिका), भाषा एवं संस्कृति विभाग, शिमला, हिमाचल प्रदेश, मार्च–अप्रैल, सन् 1985, पहला अंक, पृ०सं०–30

2 उद्धृत, पंत, एन०सी०, जोशी, कुमार, मनोज, कुमार, जितेन्द्र, हिन्दी पत्रकारिता की रूपरेखा, कनिष्का पब्लिशर्स, नई दिल्ली, सन्–1995, पृ०सं०–184

प्राप्त किया। इसी समूह की बाल–पत्रिका 'नंदन' एवं 'कादम्बिनी' का सफलतापूर्वक सम्पादन इनकी बौद्धिक क्षमता से परिचय कराता है। 'कादम्बिनी' का तो इन्होंने कायाकल्प ही कर दिया। अब यह साहित्यिक पत्रिका मात्र नहीं रही। आधुनिक तकनीक, सूचना क्रांति एवं अन्य वैज्ञानिक आलेख भी इसमें उपलब्ध होने लगे हैं। मृणाल पाण्डे अब 'हिन्दुस्तान टाइम्स' के सभी पदों से मुक्त हो चुकी हैं।

दूरदर्शन में कार्यरत होने के बाद मृणाल पाण्डे ने महिलाओं से जुड़े अनेक कार्यक्रम जैसे– 'शक्ति', 'दृष्टिकोण', 'अधिकार' आदि प्रस्तुत किये। टी०वी० पत्रकार के रूप में मृणाल पाण्डे ने दूरदर्शन के साथ–साथ स्टार न्यूज तथा आकाशवाणी को भी अपनी सेवाएँ प्रदान की हैं। इसके अतिरिक्त 'इंडियन विमेंस प्रेस कोर' जो कि महिला पत्रकारों की संस्था है, मृणाल पाण्डे भी सक्रिय रूप से इसके साथ जुड़ी हुई हैं। मृणाल पाण्डे ने क्षमा शर्मा के साथ मिलकर अपने सम्पादन में महिला पत्रकारिता की विकास–यात्रा तथा संघर्ष को 'बंद गलियों के विरुद्ध' पुस्तक में दर्ज किया है। इस विषय में प्रसिद्ध पत्रकार पद्मा सचदेव का कथन दृष्टव्य है, "जो सफर बसमतिया से भँवरी बाई तक ने बीस वर्षों में तय किया उससे भी बड़ा और दुरूह सफर वह है, जो हमारी महिला–पत्रकारों, लेखिकाओं ने तय किया है, मीराबाई से लेकर मणिमाला तक। यह संकलन इंडियन विमेंस प्रेस कोर की एक विनम्र कोशिश है, उस सफर को अपने–अपने ढंग से आज भी तय कर रही लेखिकाओं की कलम से प्रस्तुत करने की। इस सफर में हास्य भी है, करुणा भी, आक्रोश भी है और क्षमा भी।"[1] मृणाल पाण्डे ने भी पुस्तक में संकलित लेखों को महिलाओं के लिए नयी राह दिखाने में सहायक माना है, "पीढ़ी–दर–पीढ़ी, आत्महत्या और चारों ओर खड़ी बंद गलियों के चक्रव्यूह के विरुद्ध कलम उठाते चलना, अभिव्यक्ति के पुराने गढ़ और मठ तोड़ना, एक स्त्री के लिये कैसे नये क्षितिज खोलता है। किस तरह यह सफलता से कर पाना एक स्त्री के लिये एक सिरे से अपनी और इस दुनिया की नयी परिभाषाएँ गढ़ना बनता जाता है,

---

1 पाण्डे, मृणाल, शर्मा, क्षमा (संपा०), बंद गलियों के विरुद्ध, राजकमल प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली, सन्–2001, प्रस्तावना से उद्धृत

यह बात, हमें उम्मीद है, इन लेखों को पढ़ने वाले हर पाठक को शिद्दत से महसूस होगी। एक बार नहीं, बार–बार।"[1]

मृणाल पाण्डे के लिए पत्रकारिता का पेशा व्यावसायोन्मुखी न होकर समाजोन्मुखी है। उनकी तटस्थता, विषय बहुज्ञता, पैनी दृष्टि और नयी सोच अत्यंत प्रभावशाली है।

3.3.1 संपादकीय यात्रा

1. "सन् 1982–83 में विशेष संवाददाता (कला एंव संस्कृति) के रूप में 'समाचार भारती' (हिन्दी भाषा समाचार कार्यशाखा) में संलग्न रहीं।
2. सन् 1984–87 तक महिलाओं की हिन्दी मासिक पत्रिका 'वामा' का संपादकीय पद–भार संभाला।
3. सन् 1988 से दिसम्बर 1992 तक सम्पादक के रूप में 'हिन्दुस्तान टाइम्स' के 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' में कार्य किया।
4. सन् 1993 से दिसम्बर 1996 तक कार्यकारी सम्पादक के रूप में 'हिन्दुस्तान टाइम्स' के 'दैनिक हिन्दुस्तान' हिन्दी समाचार–पत्र में पद–भार संभाला।
5. मार्च 1997 से मार्च 1998 में नई दिल्ली टेलीविज़न (एन०डी०टी०वी०) लिमिटेड में वरिष्ठ सम्पादकीय सलाहकार के रूप में कार्य किया।
6. अप्रैल 2001 से सितम्बर 2009 तक 'दैनिक हिन्दुस्तान' तथा समसामयिक विषयों की लोकप्रिय पत्रिका 'कादम्बिनी' एवं इसी समूह की बाल–पत्रिका 'नंदन' की प्रधान सम्पादक रही हैं।"[2]

3.3.2 दूरदर्शन एवं आकाशवाणी की यात्रा

मृणाल पाण्डे ने लेखिका एवं पत्रकार के रूप में दूरदर्शन तथा आकाशवाणी में भी अपनी सेवाएँ दी हैं, जिसका विवरण इस प्रकार है –

---

1 पाण्डे, मृणाल, शर्मा, क्षमा (संपा०), बंद गलियों के विरुद्ध, राजकमल प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली, सन्–2001, प्रस्तावना से उद्धृत

2 पाण्डे, मृणाल, द्वारा प्रेषित व्यक्तिगत ब्यौरे से उद्धृत

1. "सन् 1986 में दूरदर्शन के लिए 13 भागों में 'देखो मगर प्यार से' धारावाहिक लिखा।
2. 'चोर निकल के भागा' नाटक का टेलीविजन हेतु रूपांतरण किया।
3. सन् 1988 में दूरदर्शन पर महिलाओं के लिए कानूनी साक्षरता से सम्बन्धित धारावाहिक 'अधिकार' का 13 भागों में प्रस्तुतीकरण किया।
4. सन् 1994 में जी०टी०वी० के लिए महिला विषयक कार्यक्रम 'शक्ति' प्रस्तुत किया।
5. सन् 1999 में दूरदर्शन के लिए भारतीय महिला की दशा एवं स्थिति पर आधारित कार्यक्रम प्रस्तुत किया।
6. दूरदर्शन पर भारत के प्रधानमंत्री सर्वश्री राजीव गाँधी, वी०पी० सिंह तथा पी०वी० नरसिम्हाराव के साथ साक्षात्कार किये।
7. सन् 1990 में हिन्दुस्तान टाइम्स समूह के टेलीविजन हेतु समसामयिक गतिविधियों पर आधारित कार्यक्रम 'खुला मंच' के सह–प्रस्तुतकर्त्ता के रूप में कार्य किया।
8. दूरदर्शन एवं आकाशवाणी के निजीकरण निरीक्षण हेतु स्थापित निकाय 'एयर टाइम कमेटी ऑफ इंडिया' (Air time commitee of India) की सदस्य के रूप में काम किया।
9. भारतीय महिला तथा बालकों की दशा एवं स्थिति पर केन्द्रित अनेक कार्यक्रमों का सफल प्रस्तुतीकरण टेलीविजन हेतु किया।
10. सन् 1989, 1990 के आम चुनाव तथा सन् 1996 में उत्तर प्रदेश विधानसभा चुनावों के परिणामों के विश्लेषण तथा विमर्श से सम्बन्धित कार्यक्रमों का सफल संचालन किया।
11. एन०डी०टी०वी० तथा दूरदर्शन की वरिष्ठ सम्पादकीय सलाहकार तथा तत्पश्चात् टी०वी० की विशेष समय सेवा में हिन्दी समाचार एवं समूह–विचार विमर्श तथा राजनीतिक विश्लेषण की प्रस्तुतकर्त्ता के रूप में कार्य किया।
12. वर्तमान में दूरदर्शन के 'लोकसभा' चैनल पर प्रस्तुत कार्यक्रम 'बातों–बातों में' का प्रस्तुतकर्त्ता के रूप में सफल संचालन कर रही हैं।"[1]

---

1 पाण्डे, मृणाल, द्वारा प्रेषित व्यक्तिगत ब्यौरे से उद्धृत

3.3.2.1 आकाशवाणी

1. "आकाशवाणी पर प्रसारित समसामयिक तथा आम चुनावों से सम्बन्धित कार्यक्रमों से लगभग 25 वर्षों से जुड़ी हुई हैं।
2. बी०बी०सी० तथा जर्मन रेड़ियो (Radio Dectscheville)की प्रसारण सेवा में प्रस्तुतकर्त्ता के तौर पर उर्दू तथा हिन्दी में विभिन्न हस्तियों के साथ साक्षात्कार किये।"[1]

3.4 मृणाल पाण्डे की विशिष्ट उपलब्धियाँ एवं पुरस्कार

मृणाल पाण्डे विलक्षण प्रतिभा की धनी हैं। सिद्धहस्त लेखिका होने के साथ–साथ कुशल अध्यापिका के रूप में भी कार्य किया है। आरंभ में विभिन्न विश्वविद्यालयों तथा महाविद्यालयों में किया गया अध्यापन कार्य भी उल्लेखनीय उपलब्धि है। उन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय में अंग्रेजी साहित्य का अध्यापन स्नातक कक्षाओं में किया। तत्पश्चात् दिल्ली विश्वविद्यालय के 'जेसस एण्ड मेरी' महाविद्यालय तथा मौलाना आजाद तकनीकी महाविद्यालय, भोपाल (मध्यप्रदेश) में व्याख्याता पद पर कार्य किया।

मृणाल पाण्डे की हिन्दी एवं अंग्रेजी दोनों भाषाओं पर पकड़ सराहनीय है। उनका चिंतक व्यक्तित्व आकृष्ट करता है, एक अच्छी प्रशासिका के तौर पर कार्य करने में भी वह सक्षम रही हैं। उन्होंने अपने जीवन में अनेक महत्त्वपूर्ण पदों पर कार्य करके विशिष्ट उपलब्धियाँ प्राप्त की हैं, जिनका उल्लेखनीय वर्णन इस प्रकार है–

1. "मृणाले पाण्डे ने जुलाई, 1988 में राष्ट्रीय आयोग के सदस्य के रूप में 'स्व रोजगार महिला' (महिला एवं बाल–विकास विभाग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय) योजना के अधीन सांसद श्रीमती इला भट्ट की अध्यक्षता में आयोग का प्रतिवेदन 'श्रमशक्ति' के नाम से माननीय प्रधानमंत्री राजीव गाँधी के समक्ष प्रस्तुत किया।

---

1 पाण्डे, मृणाल, द्वारा प्रेषित व्यक्तिगत ब्यौरे से उद्धृत

2. सन्1990–1994 में महिला पत्रकारों की संस्था 'इंडियन विमेंस प्रेस कोर' की संस्थापना की तथा अध्यक्ष पद प्राप्त किया, सन् 2001–2002 में पुनः अध्यक्ष पद हेतु चयन किया गया।

3. वर्ष 1992–96 में 'एडिटर्स गिल्ड ऑफ इंडिया' (Editor's Guild of India) के प्रधान सचिव के रूप में कार्य किया।

4. वर्ष 1997 से 2000 तक 'मिरांडा हाउस', दिल्ली विश्वविद्यालय के शासी निकाय (Governing Body)की सदस्य रहीं तथा मार्च 2002 से 2006 तक कमला नेहरू महाविद्यालय (दिल्ली विश्वविद्यालय), के अध्यक्ष पद पर कार्य किया।

5. सन् 2000–02 में महात्मा गाँधी अन्तरराष्ट्रीय विश्वविद्यालय वर्धा की कार्यकारिणी परिषद् की सदस्य के रूप में कार्य किया।

6. साहित्यिक आलोचना तथा पुस्तकीय समीक्षा से सम्बन्धित सलाहकार नामिका (Advisory Panel)की सदस्य हैं।

7. एच०आई०वी०/एड्स के उन्मूलन हेतु निर्मित संस्था 'बिल एण्ड मलिण्डा गेट्स' के सलाहकार मण्डल की सक्रिय सदस्य हैं।

8. सन् 2007–10 तक 'केन्द्रीय फिल्म प्रमाणन बोर्ड' (Central Board for Film Certifications) के सदस्य के रूप में कार्यरत रही हैं।

9. अप्रैल 2008 में हिन्दुस्तान टाइम्स लिमिटेड के 'निदेशक बोर्ड' (Board of Directors) पी०टी०आई० का प्रतिनिधित्व किया है।

10. आप 'राष्ट्रीय एकीकरण परिषद् (National Integration Council) की सदस्य भी हैं।

11. सन् 2010 से 2014 तक 'प्रसार भारती बोर्ड' के अध्यक्ष के रूप में आपने कार्य किया।"[1]

मृणाल पाण्डे समाज–कल्याण तथा व्यापक मानवीय हित के प्रतिश्रुत है। उन्होंने व्यापक स्तर पर मानवीय मंगल के प्रति आस्था के साथ संकल्पशील होकर

---

1 पाण्डे, मृणाल, द्वारा प्रेषित व्यक्तिगत ब्यौरे से उद्धृत

समस्त संभावनाओं को आलोकित करने का प्रयास किया है। एक पत्रकार की व्यस्त दिनचर्या के उपरांत भी समय का नियोजन कर एक से बढ़कर एक उत्कृष्ट कृति का सृजन करते हुए साहित्य–संसार को समृद्ध करने का उनका श्रमसाध्य प्रयास भी स्वयंमेव एक उपलब्धि ही है। 'स्त्री–विमर्श' मृणाल पाण्डे के रचनाकर्म की विशेष महत्त्वपूर्ण उपलब्धि मानी जाती है। यद्यपि स्त्री की सामाजिक दशा पर लेखिका का चिंतन आरंभ से ही दृष्टिगोचर होता है, क्रमशतः यह प्रखर से प्रखरतम होता चला गया है। 'ओ उब्बीरी.....भारतीय स्त्री का प्रजनन और यौन–जीवन' पुस्तक की रचना के समय वे स्वयं गाँव–गाँव, ढ़ाणी–ढ़ाणी भटकती हुईं प्रत्येक वर्ग की स्त्री से मिलीं तथा उनकी वास्तविक पीड़ा तथा वेदना से साक्षात्कार किया।

3.4.1 पुरस्कार

मृणाल पाण्डे को उत्कृष्ट लेखन एवं अमूल्य योगदान हेतु समय–समय पर अनेक पुरस्कारों से सम्मानित किया गया है जिसकी तालिका निम्न प्रकार से है–

1. सन् 1979 में उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा हिन्दी संस्थान पुरस्कार प्रदान किया गया।
2. सन् 1983 में 'ओम प्रकाश साहित्य सम्मान' से प्रतिष्ठित किया गया।
3. वर्ष 1985 में 'उग्र स्मृति सम्मान' एवं 'हरिदत्त शर्मा जयंती पुरस्कार' प्रदान किया गया।
4. सन् 1989 में 'महिला शिरोमणी पुरस्कार' प्रदान किया गया।
5. वर्ष 2006 में भारत सरकार द्वारा 'पद्मश्री' पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

3.5 मृणाल पाण्डे के कथा–साहित्य का अध्ययन एवं विश्लेषण

मृणाल पाण्डे का कथा–साहित्य यथार्थ जीवन की कसौटी पर कसा हुआ है। हिन्दी साहित्य में इनका कथा–साहित्य अर्थात् उपन्यास एवं कहानी दोनों क्षेत्रों का बहुमूल्य योगदान रहा है। उनकी सभी कृतियाँ जीवंत सहजता को समेटे हुए हैं। उनके उपन्यास जीवन के साथ एक गहरी सांझेदारी से लिखे गये हैं। संभवतः जब कहानियों में जीवन अनुभव उभरने असंभव हो गये तब उन्होंने उपन्यास लेखन को अपना माध्यम बनाया। लेखिका ने विविध समकालीन विषयों को लेकर छः उपन्यास

लिखे हैं। अतः सर्वप्रथम उनके उपन्यासों का अध्ययन एवं विश्लेषण किया जायेगा, तत्पश्चात् कहानियों का।

- **विरुद्ध**

मृणाल पाण्डे द्वारा सन् 1977 में प्रथम उपन्यास 'विरुद्ध' की रचना की गई। यह उपन्यास 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' समाचार–पत्र में भी धारावाहिक रूप में प्रकाशित हुआ है। प्रस्तुत उपन्यास पढ़ी–लिखी स्वाभिमानी नव–विवाहिता युवती रजनी के वैचारिक द्वन्द्व, मानसिक घात प्रत्याघात की अत्यन्त भावभीनी एवं मार्मिक कहानी है। रजनी का पति उदय विदेश से उच्च शिक्षा प्राप्त कर प्रतिष्ठित पद पर आसीन है। वह महत्त्वाकांक्षी तथा गंभीर युवक है। घर सुख–सुविधाओं से सम्पन्न है। परन्तु रजनी के मन में असंतोष भरा रहता है। विवाह को एक वर्ष बीत गया, परन्तु उदय रजनी को समझ नहीं पाया कि वह इतनी खोई–खोई सी क्यों रहती है। रजनी को सदैव यह लगता है कि उदय से विवाह करने के पश्चात् मानो उसका अस्तित्व ही समाप्त हो गया है। उसके मन में आक्रोश की भावना रहती है परन्तु यह आक्रोश किसके विरुद्ध है वह यह समझ नहीं पाती।

उदय के साथ बातचीत के दौरान वह अपने आपको बाँधकर रखने का प्रयास करती है। वह स्वतन्त्र रूप से अपने मनोभाव उदय के समक्ष नहीं रख पाती क्योंकि उसे यह आशंका रहती है कि उसका पति उसे नीचा दिखाने का प्रयास करता है। प्रायः उदय को रजनी की बातें अर्थहीन ही प्रतीत होती हैं। रजनी ऐसे परिवेश में चुप रहना ही उचित समझती है, "यूँ ही उसकी यह चुप्पी विद्रोह प्रकट करने का ..... आलसी तरीका था हमेशा की तरह।"[1] वह पति के साथ अपने–आपको व्यवस्थित नहीं कर पाती। पति का सामान्य प्रश्न भी उसके समक्ष कई–कई प्रश्न उभार देता है। रजनी अपने–आप में सिमटती चली जाती है, "अपने बेहतरीन नाखूनों को घूरते–घूरते उसने अचानक खुद को बहुत अकेला और फालतू महसूस किया था।"[2] उदय रजनी को समझाता है कि वह दिन–भर घर में खाली बैठी रहती है इससे अच्छा है कि वह अपनी आगे की पढ़ाई पूरी कर ले। रजनी को

---

1 पाण्डे, मृणाल, विरुद्ध, सरस्वती विहार, नई दिल्ली, सन्–1977, पृ०सं०–7
2 यथावत्, पृ०सं०–19

भी लगता है कि अपने व्यक्तित्व को नया रूप देने के लिए उसे क्रियाशील बनना चाहिए। अपनी सुसुप्त शक्ति को जगाने का यह उचित अवसर है, परन्तु बाद में वह फिर चिन्तन के घेरे में फँसकर यह विचार भी त्याग देती है।

रजनी की बुआ उसी शहर में रहती है वह अपनी बुआ से मिलने उसके घर जाती है। बुआ लड़कियों की अपेक्षा लड़कों को अधिक काबिल मानती है। लड़कियों को शिक्षित करने के पक्ष में भी वो नहीं है, "यूँ हमें लड़कियों को ज्यादा पढ़ाना पसंद नहीं पर आजकल सब पढ़ी–लिखी लड़की माँगते हैं। सो भेज दी।"[1] रजनी इन विचारों से सहमत नहीं है, उसे ऐसा प्रतीत होता है मानो लड़कियाँ आलू के बोरे हों जिस भी गोदाम–तहखाने में जब चाहे फेंक दिया जाए।

रजनी की माँ द्वारा छुट्टियों में उसे बुलाये जाने पर उदय उसका रिजर्वेशन करवा देने को कहता है परन्तु स्वाभिमानी होने के कारण रजनी मना कर देती है क्योंकि वह किसी पर आश्रित नहीं रहना चाहती। वह स्वयं रिजर्वेशन करवाना चाहती है, परन्तु उसमें वह असफल हो जाती है, जिसके कारण उसमें हीन भावना घर कर जाती है। उदय अपनी पत्नी की इस मानसिक स्थिति से चिन्तित हो उठता है तथा उससे कहता है, "दरअसल तुम्हारे जैसी औरतों के साथ परेशानी यह है कि तुम सोचती बहुत हो पर साथ ही दिमागी तौर से हो घोर आलसी। बस कुछ और सोचकर जवाब देने का मौका आया तो या तो जमुहाई लेने लगती हो या हिस्टीरिकल हो जाओगी।"[2]

उपन्यास में, रजनी की बहन बिल्लो का भी अप्रत्यक्ष रूप से वर्णन मिलता है। बिल्लो वाचाल, हँसमुख, जिद्दी तथा मिलनसार लड़की है। जबकि रजनी अन्तर्मुखी है। वह सामाजिक जिम्मेदारियों से भी दूर भागती है। रजनी की माँ मिसेज चन्द्रा नारी को पुरुष के बिना अधूरा मानती है। रजनी की बहन बिल्लो अपनी माँ के दिए संस्कारों के अनुरूप चलती है और अपना सुखी संसार बसा लेती है परन्तु रजनी ऐसा नहीं कर पाती। बिल्लो के घर में उसके बिना एक पत्ता भी नहीं हिलता था जब रजनी अपने व्यक्तित्व को बिल्लो के समक्ष तौलती है तो वह

---

1 पाण्डे, मृणाल, विरुद्ध, सरस्वती विहार, नई दिल्ली, सन्–1977, पृ०सं०–38

2 यथावत्, पृ०सं०–17

समझ जाती है कि अपनी जिम्मेदारियों से कतराते हुए उसने अपने आपको व्यक्तित्वहीन बना डाला है। रजनी अपनी माँ के घर में भी मानसिक जद्दोजहद से भी मुक्त नहीं हो पाती। अपनी माँ, आया, बहन, सहेली – जिससे भी मिलती है वहाँ उसे गृहस्थी के बंधनों को आदर्श बताया जाता है, परन्तु रजनी गृहिणी बनकर जीवन–यापन नहीं करना चाहती, इसीलिए उसके भीतर एक अघोषित विद्रोह कुलबुलाता रहता था, उसके मन में यह प्रश्न उभरता रहता है कि "जिन्दगी – भर क्या वह भी अपनी माँ की तरह खाविंद की परछाई का देवत्व थामे अपने को अलोप करती जाएगी?"[1] रजनी अपनी माँ के घर में भी रीझती–खीजती है, दो–चार दिन के बाद वहाँ से लौट आती है और जुझारु योद्धा की भाँति पति उदय के समक्ष खड़ी हो जाती है।

इस प्रकार 'विरुद्ध' उपन्यास का कथानक समकालीन कथा–साहित्य में प्रचलित विषयों के अनुरूप है। रजनी उस सामाजिक मान्यता का सामना करती है जिसमें स्त्री को अपने बंधनों को ही अपना गौरव मानना चाहिये, इस मान्यता के विरुद्ध लक्ष्य संधान के मार्ग में रजनी बार–बार परिवेश से टकराती है इससे उसकी धारणा क्रमशः अधिक बलवती होती चली जाती है, किन्तु परिवेश के सत्य उसमें एक कुण्ठा का संचार भी कर देते हैं और यही कुण्ठा उपन्यास के फलक पर निर्णयहीनता, उलझन, बहस और क्रोध के रूप में अभिव्यक्ति प्राप्त करती है।

- **पटरंगपुर पुराण**

प्रस्तुत उपन्यास सन् 1983 में प्रकाशित हुआ। इस उपन्यास के द्वारा लेखिका ने स्पष्ट किया है कि स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् सरकारी नीतियों और विकास–सम्बन्धी कार्यक्रमों के कारण पहाड़ी जीवन बहुत नहीं तो कुछ तो परिष्कृत एवं समृद्ध हुआ ही है। पटरंगपुर गाँव में यह परिवर्तन विशेष रूप से लक्षित है क्योंकि यह गाँव पीढ़ियों के अन्तराल के पश्चात् गाँव नहीं रह जाता बल्कि एक कस्बा अर्थात् उपनगर बन जाता है। ग्रामीण असुविधाएँ पूरी तरह निःशेष तो नहीं होती परन्तु उपनगरीय सुविधाएँ बहुत हद तक प्राप्त हो जाती हैं। पटरंगपुर गाँव तो

1 पाण्डे, मृणाल, विरुद्ध सरस्वती विहार, नई दिल्ली, सन्–1977, पृ०सं०–59

मात्र उपन्यास में प्रतीक रूप में प्रकट हुआ है। वस्तुतः यह पूरे पहाड़ी–जीवन का और उसमें हो रहे परिवर्तनों को रेखांकित करने का माध्यम है। 'पटरंगपुर पुराण' उपन्यास में पहाड़ी जीवन का गहराई से चित्रण कर मृणाल पाण्डे ने अपने पूर्वजों का ऋण उतारा है।

मृणाल पाण्डे ने उपन्यास में आख्यायिका शैली द्वारा 'आमा' (लक्ष्मी) चरित्र के माध्यम से पर्वतीय क्षेत्र कुमायूँ–गढ़वाल में बसे गाँव 'पटरंगपुर' के समूचे इतिहास को रेखांकित किया है। लेखिका ने इतिहास एवं कल्पना द्वारा 'आमा' जो रामदज्जी ब्राह्मण की पुत्री है उसकी एक नहीं अपितु ग्यारह पीढ़ियों की कहानी को उपन्यास का आधार बनाकर अपने उद्देश्य को पूर्ण किया है। उपन्यास की कथावस्तु में 15 पर्व – आदि पर्व, राज पर्व, वन पर्व, नगर पर्व, बिलायत पर्व, टूरिस्ट पर्व, महाभोज पर्व, छींक पर्व, थुमिया पर्व, सरकस पर्व, तितुली कैंजा पर्व, रेफूजी पर्व, बास पर्व, निर्जल पर्व एवं अंत में उपसंहार को प्रस्तुत किया गया है।

उपन्यास का आरम्भ 'आदि पर्व' से होता है। त्रेतायुग में राम–रावण के युद्ध प्रसंग के साथ–साथ भारतवर्ष के भूतकाल की राजशाही को भी अंकित किया गया है। "नदियों की बालू से तक सोना निकलने वाला ठहरा तब। जमीन ऐसी ठहरी, सुना, कि बाएँ हाथ से आँख बंद करके भी नाज छींट दो तो ऐसी फसल हो जाने वाली हुई।"[1] परन्तु धीरे–धीरे परिवर्तनशील समय अपने प्रवाह में बहुत कुछ परिवर्तित कर देता है। 'पटरंगपुर' गाँव के नामकरण के विषय में रोचक किस्सा सुनाते हुए आमा बताती है कि काली कुमायूँ के चंद्रवंशी राजा यहाँ शिकार खेलने आये तथा यहीं आकर बस गये। राजा के साथ रेशम के कारीगर भी थे। चीन देश से शहतूत के पेड़ पर पलने वाले रेशम के कीड़ों की पिटारी लेकर आए कारीगरों ने अनेक मुहल्ले बसाये, वे राजा तथा मंत्रियों के लिए रेशम बुनते थे। उनके द्वारा बुने गये पट्ट को रंगते–रंगते गाँव का नाम पड़ा गया–'पटरंगपुर'।

इसी पर्व में आमा के व्यक्तिगत जीवन का परिचय भी दिया गया है। आमा का विवाह कम उम्र में दुर्गादत्त से हो गया था। उसकी तीन बेटियाँ हैं– विद्या, मैना और सुभागा। उसके घर पुत्र (हरिया) का जन्म भी होता है।

---

1 पाण्डे, मृणाल, पटरंगपुर पुराण, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली, सन्–1983, पृ०सं०–9

'राजपर्व' अध्याय में 'पटरंगपुर' गाँव की परिवर्तित राजकीय परिस्थितियों को व्यक्त किया गया है। यहाँ मुस्लिमों का शासन आ गया था। जाति के आधार पर भेदभाव बढ़ने लगा था। 'टुकडिया' नामक मुस्लिम शासक बहुत क्रूर था, उसने पटरंगपुर पर आक्रमण कर दिया। पूरे गाँव में खुशी की लहर दौड़ जाती है परन्तु आमा का पुत्र हरिया युद्ध मे मारा जाता है। समाज में ब्राह्मणों का वर्चस्व भी बढ़ने लगा था। उच्च वर्ग एवं निम्न वर्ग में अंतर बढ़ने लगा था। इस पर्व में लेखिका ने आमा के परिवार का परिचय देते हुए बताया है कि उसकी तीनों बेटियों का विवाह क्रमशः शिवदत्त, चनदत्त और शोभादत्त से होता है। विद्या का विवाह राजघराने के ब्राह्मण परिवार में हुआ था, विद्या ने चार बच्चों को जन्म दिया, चंदा उसी की बेटी है।

मुस्लिम शासन के पश्चात् गोरखा राज्यशासन की स्थापना से उत्पन्न परिस्थितियों का वर्णन 'वन पर्व' में किया गया है। गोरखों ने चारों ओर त्राहि–त्राहि मचा रखी थी। ब्राह्मणों के साथ दुर्व्यवहार किया जाने लगा। गोरखे ब्राह्मणों को श्राद्ध के बहाने घर बुलाकर काम करवाते तथा मारते–पीटते भी थे। गोरखों के पीटने के कारण चंदा के पति की भी मृत्यु हो जाती है। इसी समय चंदा ने अपनी बेटी भगवती को जन्म दिया।

पचास वर्ष पुराने गोरखा शासन का समापन तथा अंग्रेजी राज्य के प्रवेश का ब्यौरा 'नगर पर्व' में दिया गया है। अंग्रेजी शासन के आगमन से पटरंगपुर गाँव में अनेक परिवर्तन परिलक्षित होते हैं। वहीं आमा अपनी पीढ़ी के विस्तार के विषय में बताती है कि अंग्रेजी राज के समय ही भगवती का विवाह हरनंदन पाण्डे से हुआ, उनके पुत्र का नाम हरवल्लभ था तथा हरवल्लभ के घर बुद्धिबल्लभ का जन्म हुआ। सरला भगवती की पुत्री थी। सरला की बेटी मुन्नी तथा मुन्नी की बेटी चुनिया (आमा) 'विष्णुकुटी' की रानी बनी। हरबल्लभ का परिवार 'विक्टोरिया कॉटेज' तथा सरला का परिवार 'विष्णुकुटी' में रहता था। चुनिया का विवाह हंसादत्त पाण्डे के साथ होता है। चुनिया के दादा अमीर थे तथा उसे काफी सामान देते रहते थे। चुनिया की सास ताने मारती लेकिन देवर चनिका उसकी सहायता करता। चुनिया का पति दूर ब्राह्मण कर्म करते हुए नौकरी करता है। चुनिया ने सात बच्चों को

जन्म दिया, पहले दो लड़कियाँ हुई "फिर तो लौंडो की लैन की लैन हो गयी। देवदत्त के बाद अम्बादत्त, फिर पद्म, फिर हरीश, फिर अंत में सुनैना।"[1] चुनिया की बेटियों में से सिर्फ सुनैना ही जीवित रही।

अंग्रेजी शासन के दौरान लोगों में अंग्रेजी शिक्षा के प्रति रुझान पैदा होने लगा, उच्च शिक्षा की प्राप्ति हेतु विदेश गमन की चर्चा होने लगी जिसका विशद् वर्णन 'बिलायत पर्व' में किया गया है। इस पर्व में पहाड़ी ब्राह्मण के पुत्र लिलुवा का प्रसंग प्रस्तुत किया गया है जो विलायत जाकर अंग्रेजी शिक्षा ग्रहण करना चाहता था परंतु ब्राह्मण समुदाय इसके विरुद्ध था परंतु कई ऐसे ब्राह्मण भी थे जिन्होंने लिलुवा का पक्ष लिया। जिनमें 'विक्टोरिया कॉटेज' के हरबल्लभ जोशी का लड़का बुद्धिबल्लभ शामिल था। लिलुवा विदेश चला जाता है, गाँव के अनेक लोग भी जाने के लिए तैयार हो जाते हैं। जिनमें आमा के पुत्र पद्म का सुपुत्र सुरेंद्र और उसका बेटा नरेंद्र प्रमुख हैं। आमा ने अपना संपूर्ण जीवन पटरंगपुर में ही व्यतीत किया, वह कभी भी विदेश जाना नहीं चाहती थी।

'टूरिस्ट पर्व' में पटरंगपुर गाँव के कायाकल्प को व्यक्त किया गया है। अंग्रेजी शासन के प्रभाव के कारण अब यह गाँव कस्बा बन गया था। गाँव के तालाब को झील बनाकर नावें चलायी गईं। अंग्रेजों ने मनोरंजन के लिए क्लब तथा यात्री–गण सुविधा हेतु बस–अड्डे का निर्माण किया। "घुर्र करके मोटर चली, तो गाँव के लोग अंगरेज बहादुर की काला (कला) की जै–जैकारी करने वाले हुए।"[2]

विक्टोरिया कॉटेज में अंग्रेजी को महत्त्व दिया जाता था। महारानी विक्टोरिया की तसवीर घर में लगाकर रखते थे। विष्णुकुटी के निवासी परपंरावादी एवं रूढ़िवादी थे। चुनिया की लड़की हीरा–तारा की मृत्यु हैजे से हो जाती है, चुनिया की आँखों की रोशनी शीतला रोग के कारण चली जाती है। उधर बुद्धिबल्लभ के पुत्र ब्रह्मदत्त का बेटा गोपालदत्त अंग्रेजी पढ़कर डिप्टी क्लैक्टर बन जाता है तथा उसका विवाह बिन्दु नामक लड़की से होता है। उसके तीन बच्चे हुए– राजीव, रवि तथा इन्दु। लिलुवा भी बैरिस्टर बनकर विदेश से वापिस आ जाता है।

---

1 पाण्डे, मृणाल, पटरंगपुर पुराण, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली, सन्–1983, पृ०सं०–45
2 यथावत्, पृ०सं०–54

धीरे–धीरे पटरंगपुर गाँव का वातावरण भी अंग्रेजी शासन के अत्याचारों से प्रभावित होने लगा था। जिसके कारण पटरंगपुर वासियों में अंग्रेजों के प्रति घृणा का भाव जोर पकड़ रहा था।

'महाभोज पर्व', भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् पटरंगपुर गाँव से भी अंग्रेजी शासन का समापन तथा उनके रहन–सहन, खान–पान तथा भाषा का प्रभाव गाँव में रहने को चित्रित करता है।

'छींक पर्व' में आमा गोपालदत्त की पत्नी बिन्दु के विषय में बताती है कि वह बहुत चालाक तथा व्यावहारिक है। बिन्दु विष्णुकुटी में चुनिया के पास जाती है तथा उसके पुत्र देविया को वश में करके, चुनिया से सलाह किये बिना उसका विवाह अपनी बेटी इन्दु से कर देती है और उन्हें दूर प्रयाग भेज देती है। इन्दु अपने देवर (चुनिया का छोटा बेटा) हरीश का विवाह अपनी भतीजी से करवा देती है। चुनिया की पुत्री सुनैना कम उम्र में ही विधवा हो जाती है। उसकी दो बेटियाँ हुईं – सावित्री तथा गायत्री। सुनैना की मृत्यु भी कैंसर के कारण हो जाती है।

कथाकार मृणाल पाण्डे ने 'थुमिया पर्व', 'सरकस पर्व', 'तितुली कैंजा पर्व', 'रेफूजी पर्व', 'बास पर्व' तथा 'निर्जला पर्व' में आमा द्वारा सुनाये दादी–नानी के किस्से, कहानी एवं रोचक वृतांत के साथ 'पटरंगपुर' गाँव की धार्मिक, राजकीय एवं सामाजिक परंपराओं में उत्पन्न परिवर्तनों को उजागर किया है। 'मोक्ष पर्व' तथा 'उपसंहार पर्व' आमा के गौरवपूर्ण जीवन के अंतिम क्षण को व्यक्त करता है। 'आमा' पटरंगपुर गाँव के लिए बरगद के पेड़ के समान थी। अंतिम समय में उसका पूरा परिवार (विक्टोरिया कॉटेज तथा विष्णुकुटी) चारों ओर से उसे घेरकर खड़ा हुआ है। वह एक स्वाभिमानी औरत थी, उसने अपने क्रियाकर्म का खर्च मरने से पहले ही तैयार कर रखा था ताकि उसकी बेटियों का पैसा खर्च न हो। वह जीवनपर्यंत दुःखी रही, फिर भी सदैव प्यार ही बाँटती रही। संयुक्त परिवार के सभी सदस्य इस उपन्यास में मिलते हैं–पति–पत्नी, सास–बहू, देवर–भाभी, देवरानी–जेठानी, दादी–पौत्र आदि।

पटरंगपुर गाँव के रीति–रिवाज, वर्ण–व्यवस्था, धार्मिक अंधविश्वास, पारिवारिक व्यवस्था, पारिवारिक सम्बन्ध और समाज में नारी की स्थिति को लेखिका ने सजीव रूप में साकार किया है। इस उपन्यास के विषय में राजेन्द्र घोड़पकर ने लिखा है, "त्रेतायुग से मध्ययुग तक और अंग्रेजी राज से होकर बीसवीं शताब्दी तक का यह सफर स्त्रियों की स्मृति और कल्पना में तय होता है और हमें पटरंगपुर की और हमारे वक्त की एक बिल्कुल अनदेखी तस्वीर हासिल होती है, जिसके बारे में फिर कहा जा सकता है कि वह समाजशास्त्रीय अध्ययनों से हासिल नहीं होती। हमारे तमाम अच्छे–बुरे, भयावह और हास्यास्पद दुःखद और सुखद प्रसंग हैं और उन पर टिप्पणियाँ हैं जो इसलिए महत्त्वपूर्ण हैं क्योंकि वे एक सीमित दृष्टिकोण से ली गई हैं, एक छोटे से कस्बे की ऐसी औरतों के दृष्टिकोण से, जिन्होंने बाहर की दुनिया लगभग नहीं देखी।"[1]

- **देवी : समयातीत गाथाएँ स्त्रियों की**

मृणाल पाण्डे द्वारा रचित उपन्यास 'देवी : समयातीत गाथाएँ स्त्रियों की' का प्रकाशन सन् 1999 में हुआ। मूलतः यह उपन्यास अंग्रेजी में (देवी : टेल्स ऑफ वूमन इन ऑवर टाइम्स) लिखा गया है, इसका हिंदी रूपांतरण मधु बी०जोशी द्वारा किया गया है। उपन्यास का कथानक सर्वथा नवीन प्रकृति का है। इसमें किसी एक या दो पात्रों की कथा नहीं है और न ही कोई पात्र मुख्य है। किसी भी पात्र की कोई मुख्य कथा नहीं है। लेखिका ने एक साथ कई घटनाओं एवं कथाओं का ब्यौरा दिया है। पौराणिक कथाओं को आधुनिक संदर्भ से जोड़ने का प्रयास किया है। आदिशक्ति 'देवी' जो हिंदुओं की पूज्य है उसकी गाथाओं के माध्यम से स्त्री विषयक चिंतन को भी उभारा गया है। मृणाल पाण्डे ने लिखा है, "स्त्रियाः समस्ताः सकला जगत्सु, तव देवि रूपाः...! संपूर्ण सृष्टि की महिलाएँ, हे देवी, वस्तुतः तुम्हारे ही विभिन्न स्वरूप हैं। स्त्रियों के विभिन्न स्वरूपों की डोर पकड़कर आदिशक्ति के मूल स्वरूप को समझना और शक्ति के नाना रूपों के आइने में आज से लेकर आर्षकालीन समाज की स्त्रियों की ढेरों लोक कथाओं, महागाथाओं, आख्यानों को

---

1 सिंह, नामवर (डॉ०) (संपा०), आधुनिक हिन्दी उपन्यास–2, राजकमल प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली, सन्–2010, पृ०सं०–50

नए सिरे से पकड़कर व्याख्यायित कर पाना – यही इस विचित्र पुस्तक का मूल अभीष्ट है।"[1]

लेखिका ने कथानक को प्रस्तावना सहित तेरह प्रकरणों में विभाजित किया है। प्रस्तावना के अन्तर्गत उन्होंने बचपन के अपने पारिवारिक, धार्मिक वातावरण का परिचय देते हुए देवियों की पूजा–विधान के विषय में अंकन किया है, "चलिए आमा की पूजा–कोठरी की ओर फिर लौटें ! वहाँ विराजमान देवियाँ मोटे तौर से दो श्रेणियों में आती थीं : एक तो वे जो पूरी तरह आत्मसंभवा और एकल हैं। दूसरी वे जो घर–परिवार वाली हैं।"[2] लेखिका ने महाकाली, महालक्ष्मी तथा महासरस्वती को एकल आत्मसंभवा देवियाँ माना है। वहीं सीता, पार्वती तथा षोड्श मातृकाओं को घर–परिवार वाली देवियाँ माना है।

प्रथम प्रकरण 'युयुत्सु देवी' के आरंभ में मृणाल पाण्डे ने वर्तमान समय की कुछ ऐसी घटनाओं का उल्लेख किया है जिनमें स्त्री की दुर्दशा उभरकर आती है। स्त्री की दशाओं को देवी की गाथाओं से जोड़ते हुए उन्होंने लिखा है, "धीरे–धीरे एक बात साफ होने लगी है, शक्ति की गाथा जिस बिन्दु से भी शुरू हो, उसका प्रवेश द्वार हमेशा चलायमान रहेगा और उसकी पृष्ठभूमि भी ! और सभी गाथाओं में अनूठी द्वंद्वात्मक जोडियाँ रहेगीं : शक्ति और शक्तिहीनता, जय और पराजय, जन्म और मृत्यु, हास्य और पीड़ा।"[3] प्रकरण में मुलायम सिंह की दमनकारी सरकार और उसके विरुद्ध पहाड़ी महिलाओं के संघर्ष को व्यक्त करते हुए उन्हें 'शैलपुत्री' की संज्ञा दी है।

'शैलपुत्री' प्रकरण में नैनीताल की झील के किनारे स्थित 'नैना देवी' के प्राचीन मंदिर के विषय में बताया गया है कि पिता से उपेक्षित तथा अपमानित शिव की पत्नी सती द्वारा अपने जीवन का अंत कर लेने पर शिव अत्यधिक क्रोधित हो जाते हैं। उनके क्रोध को शांत करने के लिए विष्णु ने सती की मृत देह के इक्यावन टुकड़े कर दिए जिस स्थान पर सती के नेत्र गिरे वहीं पर प्रसिद्ध मंदिर

---

1 पाण्डे, मृणाल, देवी : समयातीत गाथाएँ स्त्रियों की, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा० लि०, नई दिल्ली, सन्–1999, आवरण पृष्ठ से उद्धृत

2 यथावत्, पृ०सं०–X, प्रस्तावना से उद्धृत

3 यथावत्, पृ०सं०–27

'नैना देवी' बना। कथा के माध्यम से कथाकार ने स्त्रियों के भीतर छिपी उपेक्षा की इस पीड़ा को वर्तमान स्थितियों से जोड़ते हुए 'विजया की कथा' तथा 'नंदी मौसी की कथा' को स्वर दिया है। अपने स्वाभिमान तथा आत्मसम्मान के लिए कष्ट उठाने के लिए भी स्त्री सदैव तैयार रहती है, यह भाव 'पारू मौसी की दास्तान उर्फ सास का मानमर्दन' शीर्षक से इसी प्रकरण में लघु प्रसंग के रूप में उठाया गया है।

स्त्रियों को मात्र वासना पूर्ति की वस्तु मानना, उन पर अत्याचार एवं व्यभिचार करने वाली पुरुष मानसिकता के विरुद्ध स्त्री के स्वर को 'देवी की कुछ और गाथाएँ' प्रकरण में अभिव्यक्त किया गया है। लेखिका ने दैत्यों एवं पार्वती के मध्य हुए युद्ध के द्वारा आधुनिक घटनाक्रम को गूँथकर उस स्थिति को व्यक्त किया है जब वेश्याएँ समाज में ऐसे ही दैत्य रूपी दंभी पुरुषों की सत्ता को ललकारती हैं। अन्य प्रसंग में औरतों द्वारा शराब के ठेकेदारों के विरुद्ध किये गये संघर्ष और उनकी जीत का उल्लेख कर स्त्री के भीतर की शक्ति को काली तथा चामुंडा की शक्ति से जोड़ा है।

'सरस्वती' प्रकरण में उसी देवी के सौम्य शांत स्वरूप को दर्शाते हुए उन महिलाओं को इंगित किया है जो अपना लक्ष्य प्राप्त करने के लिए लोक–व्यवहार के प्रति अनासक्त हो जाती हैं, उनकी अपनी दुनिया होती है, अपनी एक धुन होती है जिसमें डूबकर वे संसार में रहकर भी वैरागी बनी रहती हैं। प्रकरण में 'मौसी और नदी के नामवाली देवी की कथा' ललिता मौसी उर्फ ललिता की करुण दास्तान की अभिव्यक्ति है, जो आत्मकेन्द्रित थी। परिवार में उसकी उपस्थिति नाम मात्र की ही थी। उसे पढ़ने में रुचि थी, दादा से संस्कृत पढ़ने लगी। दादा की मृत्यु के पश्चात् विवाह के विचार को त्यागकर वह घर से सुदूर विश्वविद्यालय में अध्यापन के लिए चली जाती है। सरस्वती का यह प्रकरण यहीं समाप्त हो जाता है परंतु ललिता की कथा के सूत्र आगे के प्रकरण में जुड़ते जाते हैं।

प्रकरण 'सरस्वती की संतानें' में मृणाल पाण्डे ने स्पष्ट किया है कि लक्ष्मी अथवा पार्वती जैसी देवियों की तुलना में सरस्वती को घर परिवार की पूजा में कम महत्त्व दिया गया है। लेखिका का मानना है कि सरस्वती की संतानों अर्थात्

सरस्वती के पथ पर चलने वालों को अपनी मान्यताओं को त्यागना होगा। ललिता भी सरस्वती की ही संतान थी। वह विद्याव्यसनी बनकर ही रह गयी, सांसारिकता का पुट उसमें नहीं आ पाया।

शक्ति के ऐश्वर्यमयी रूप का वर्णन 'लक्ष्मी' प्रकरण में किया गया है। समकालीन परिस्थितियों के साथ प्रसंगों को जोड़ते हुए कथाकार ने 'वेश्या रेवती की कथा' को भी चित्रित किया है। प्रकरण में 'क' की कथा द्वारा धन एवं ऐश्वर्य के वातावरण में घुटती मानवीय भावनाओं पर चिंतन व्यक्त किया गया है। 'सासजी' प्रसंग में 'लक्ष्मी' के उस घरेलू रूप को दर्शाया गया है, जो अधिकारप्रिय है। दूसरों को अपने अधिकार हस्तांतरित करने में कृपण भी है।

'भूदेवी' प्रकरण में पृथ्वी पर हुए अत्याचार तथा उसके विरुद्ध पृथ्वी के संघर्ष की विजय को व्यक्त किया गया है। मृणाल पाण्डे ने मेधा पाटेकर द्वारा नर्मदा नदी पर बनने वाले बाँध के विरोध को चित्रित कर स्त्री के सत्याग्रही स्वरूप को दर्शाया है। उन्होंने ललिता मौसी के प्रसंग द्वारा उसके उस अवतार को भी प्रकट किया है जिसमें उसका लक्ष्मी रूपी राजसी स्वरूप प्रकट होता है। एक डॉक्टर से विवाह कर वह सांसारिक महिला बन जाती है। प्रकरण के अंत तक वह ललिता मौसी से 'बड़ी अम्मा' बन जाती है।

प्रकरण 'भूदेवी के बदलते तेवर' में ललिता मौसी परिवार की सर्वेसर्वा बन जाती है। उसके बेटों की बहुएँ आ जाती हैं, वह परंपरागत सास बन प्रत्येक क्षण अपनी सत्ता को अक्षुण्ण रखने का प्रयास करती है। अतः इस प्रकरण में स्त्री जीवन के तीसरे सोपान को प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया गया है।

'ग्रामदेवियाँ' प्रकरण में देवी के ऐसे स्वरूपों की चर्चा की गयी है, जो अपना प्रभाव अथवा पहचान छोटे क्षेत्र विशेष में ही रखती हैं। ग्राम–देवियाँ समाज की उन स्त्रियों का प्रतिनिधित्व करती हैं जो उपेक्षित हैं परंतु फिर भी अवसरवादी समाज के लोग उनसे अपना स्वार्थ साध ही लेते हैं।

प्रकरण 'रौद्र शक्तियाँ' में स्पष्ट किया गया है कि सती के कोप से रौद्र शक्तियों की उत्पत्ति हुई है। जिनमें काली, भैरवी, छिन्नमस्ता, तारा, बगला, धूम्रावती,

मातंगी आदि हैं। सभी रौद्र , युयुत्सु देवी के रूप में पूजी जाती हैं। लेखिका ने इसी प्रकरण में स्त्री शक्ति को वर्तमान परिस्थितियों में 'सरूली और हीराबल्लभ की वह दुःख भरी दास्तान' शीर्षक में व्यक्त किया है।

प्रकरण 'प्रातःस्मरणीय' में अहिल्या, द्रोपदी, तारा, कुंती और मंदोदरी आदि पौराणिक स्त्रियों का वर्णन है। नारी–शक्ति के संघर्ष को मृणाल पाण्डे ने पुरातन समाज से लेकर वर्तमान समाज तक चित्रित किया है। राजस्थान की दलित महिला भँवरी बाई, बंगाल की आदिवासी महिला रेपे मुर्मु, महिला अधिकारी रूपन देओल बजाज आदि के साथ हुए दुर्व्यवहार तथा उसके विरुद्ध न्याय पाने हेतु की गयी जद्दोजहद को सुदृढ़ता से उभारा गया है।

'उत्तरकथन' में मृणाल पाण्डे ने उपन्यास में वर्णित समस्त किस्सों, वास्तविक घटनाओं तथा पौराणिक संदर्भों में देवी के विभिन्न स्वरूपों में झलकती इनकी प्रतिच्छाया के आपसी सम्बन्ध के प्रश्न पर लिखा है, "आप पूछते हैं कि इस कहानी का देवी से क्या लेना–देना है? इस संदर्भ में उसे क्यों उठाया जाए? मैं आपसे ही पूछती हूँ कि अगर हर औरत की कहानी आपके मन को सवालों से बेध दे तो आप खुद क्या करेंगे? अगर आपको लगे कि कुछ अनाम लेकिन पहचाना–सा औरतों की कहानियों के नीचे गाथाओं की नम काली मिट्टी में छिपकर सुरंग खोद रहा है तब आप क्या करेंगे? आप जानने की कोशिश नहीं करेंगे कि वह क्या या कौन है? ..... मेरी ही तरह आप भी उत्तर ढूँढना नहीं चाहेंगे?"[1] चिंतन के इसी बिन्दु पर आकर उपन्यास का कथानक अपने इस गूढ़ तथा कटु सत्य को प्रकट करता है कि वस्तुतः देवी तथा स्त्रियों के इन सापेक्ष किस्सों या घटनाओं का साम्य यही दर्शाता है कि पुरुष प्रधान समाज में स्त्री का अस्तित्व के लिए संघर्ष होता रहा है तथा आज भी यह अनेक परिवर्तित रूपों में अनवरत चल रहा है।

अतः मृणाल पाण्डे ने प्रस्तुत उपन्यास में स्त्री सत्ता का देवी सत्ता से तुलनात्मक विवेचन करके न केवल स्त्री की बेचैनी के भीतर की पीड़ा को उजागर

---

1 पाण्डे, मृणाल, देवी : समयातीत गाथाएँ स्त्रियों की, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली, सन्–1999, पृ०सं०–171

किया है, अपितु अनेक स्तर पर चिंतन को प्रेरित कर, एक अवसर प्रदान किया है– पुरुष प्रधान सामाजिक व्यवस्था में स्त्रियों की स्थिति पर पुनर्विचार का।

- **रास्तों पर भटकते हुए**

'रास्तों पर भटकते हुए' उपन्यास का प्रकाशन सन् 2000 में हुआ। उपन्यास में मंजरी के द्वारा मृणाल पाण्डे ने अपने अनुभवों को ही एक बड़े हिस्से के रूप में प्रस्तुत किया है। इस अनुभव–यात्रा में व्यवस्था की परतें धीरे–धीरे खुलती और उघड़ती चलती हैं।

उपन्यास नायिका मंजरी कुमाऊँ के किसी गाँव की सीधी–सादी, साधारण पृष्ठभूमि वाले परिवार से आई लड़की है। उसका विवाह नाटकीय परिस्थितियों में बहुत सम्पन्न एवं ऊँची पहुँच वाले डॉक्टर के बेटे से हो जाता है, बेटा विदेश में किसी विदेशी लड़की से प्रेम करता है परन्तु पिता को यह नापसन्द था। इसीलिए वह अपने बेटे के लिए मंजरी को पसन्द करता है। यह विवाह बेमेल था। साल भर बाद ही दोनों का तलाक हो जाता है। तलाक के मुआवजे के तौर पर मंजरी का डॉक्टर ससुर उसे फ्लैट रहने के लिए देता है। लेकिन वह उसी फ्लैट को किराए पर उठाकर जमुना पार की सस्ती बस्ती में अपनी हैसियत के लोगों के बीच रहती है और पत्रकारिता को अपनी रोजी–रोटी का साधन बना लेती है। लेकिन यह अधिक समय तक नहीं निभता क्योंकि वहाँ स्त्री पत्रकार तथा पुरुष पत्रकारों के बीच की खाई बहुत चौड़ी है। मंजरी अपने सरोकारों में, पेशे और व्यक्ति के रूप में कोई विभाजन स्वीकार नहीं करती। अपने पेशे में वह वही है जो एक व्यक्ति के रूप में अपनी जिन्दगी में है।

मंजरी की दुनिया में डॉक्टर ससुर, उसका भाई, राजनेता, पत्रकार, बंटी तथा उसकी माँ पर्वती हैं। अपनी इच्छा और विवेक से मंजरी इस दुनिया को चुनती है। उपनिषद् की यह उक्ति उसे मालूम है कि सत्य के पात्र का मुँह स्वर्ण से दबा और मुँदा है, लेकिन फिर भी स्वर्ण के वर्चस्व वाली इस दुनिया के विरोध में खड़ी होकर वह 'सच' को जानना चाहती है। बंटी और उसकी माँ पार्वती मंजरी के घर के नजदीक रहते हैं। बंटी उर्फ 'बिनोद कुमार' की उम्र साढ़े सात वर्ष की है। बंटी की

माँ वेश्या है। बंटी का मंजरी के घर आना–जाना हो जाता है। इस तरह दोनों का एकाकी तथा उपेक्षित जीवन एक–दूसरे के संबल का कारण बन जाता है। बंटी अपनी घरेलू परिस्थितियों से भी मंजरी को अवगत कराता है, "कभी–कभी उसके घर आने वाले अंकल लोग उस पर हाथ उठा देते थे, खासकर जब दारू ज्यादा पी ली हो। उस बखत मैं कतई कभी नहीं रोता, नहीं तो साले देख लेते हैं दीदी, कि उन्होंने मुझे रुला दिया फिर बड़े खुश हो जाते हैं।"[1] एक दिन आकस्मात् बंटी लापता हो जाता है और कुछ समय बाद उसका शव सड़ी–गली अवस्था में प्राप्त होता है। "किसी महत्त्वपूर्ण व्यक्ति की रहस्यमय रखैल का यह मासूम–गर्वीला बच्चा, अंगुली पकड़ कर मंजरी को अपने साथ उन रास्तों पर भटकाता है, जहाँ पैर रखने से वह कतराती रही है। पहले बंटी और उसके बाद उसकी माँ की नृशंस हत्या और राजधानी के सुरक्षा तंत्र की रहस्यमय चुप्पी मंजरी को इन हत्याओं की तह में जाने को बाध्य करती है। बंटी की स्मृति के सहारे तब मंजरी एक स्याह पाताली गंगा के दर्शन करती है, जो देश के मर्म, उसकी राजधानी के तलघर में कई रहस्यमय भेदों को छुपाए बह रही है। चाहे न चाहे मंजरी के अपने जीवन के कई स्त्रोत् भी इससे जुड़े हुए निकलते हैं। दो मौतों की तफ्तीश के बहाने मंजरी अपने निजी जीवन, विवेक एवं अपनी अंतरात्मा की परिक्रमा करते हुए रास्तों पर भटकती है।"[2] बंटी की हत्या के पीछे कई तार जुड़े हुए हैं जिनमें उसका ससुर, उसका पति, प्रभावशाली राजनेता शामिल हैं। मंजरी अपने धूर्त ससुर के बारे में बताती है, "जीवन की गुणवत्ता, दि क्वालिटी ऑफ लाइफ, वह मानदण्ड था जिसे दिखाते हुए उनके मातहत डॉक्टरों की टीम अम्नीयोंसेंटीसिस तकनीक से गर्भजाल जाँचकर बेटे की हवस से पगलाती माँओं को अनचाहे कन्या–भ्रूणों से ग्लानि रहित मुक्ति दिला देती थी! यही टीम क्लोरोक्विन के इंजेक्शन ठोंककर गरीब औरतों के सस्ते गर्भपात मुहैया कराने के साथ ही उनको बधिया भी कर देती थी, ताकि महँगे गर्भाधान का कष्ट बेचारियाँ बार–बार न झेलें, और लिपोसक्शन तकनीक से अमीर औरतों के चूतड़ों, छातियों और जाँघों से मोटापा तराशकर वह उनको भी ऐसी कमनीय छरहरी

1 पाण्डे, मृणाल, रास्तों पर भटकते हुए, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली, सन्–2000, पृ०सं०–34
2 यथावत्, आवरण पृष्ठ से उद्धृत

देहें दे देती, कि उनके पति अपनी रखैलों और सेक्रेटरियों के प्रेम जाल से कुछ अरसे तक विरक्त हो जाते हैं।"[1] डॉक्टर ससुर अपने पेशे से अपार धन कमा लेता है। धीरे–धीरे वह राजनेताओं से साँठ–गाँठ कर लेता है क्योंकि वे लोग इसीसे अपना इलाज करवाते थे। इन्हीं में से एक थे भूतपूर्व केन्द्रीय मन्त्री शान्तिस्वरूप उर्फ शान्ति भैया। आज पार्टी में उनका कोई ओहदा नहीं है, लेकिन दबदबा पूरा है। उनकी बाईपास सर्जरी मंजरी के ससुर द्वारा ही की जाती है। जिससे उसे एक नया जीवनदान मिल जाता है। पारस्परिक कृतज्ञता के वे सूत्र विभिन्न रूपों में आज भी वैसे ही हरे–भरे हैं। राजनीति के आरम्भिक दौर में कभी पार्वती उनके कर्मचारी क्वार्टर में रहती थी। पार्वती के साथ शांति भैया के अवैध सम्बन्ध थे। बंटी की मौत के सूत्र भी यहीं से जुड़ते और संचालित होते हैं। पुलिस और सहयोगी पत्रकार में से कोई भी इन सभी के विरुद्ध सबूत नहीं जुटा पाते क्योंकि ऊपर का दबाव बना रहता है। मंजरी अपने भाई से भी मदद माँगती है। मंजरी का भाई भी उसे यही समझाता है कि वह इस केस से दूर रहे लेकिन वह डटी रहती है। वैसे मंजरी तथा उसके भाई के मध्य आपसी सम्बन्ध मधुर नहीं हैं। भाई की वातानुकूलित स्याह मखमली दुनिया है। जिससे उसकी माँ पार्वती तथा मंजरी का स्थान उपेक्षित है।

मंजरी अपने पथ से डगमगाती नहीं है उसकी इस यात्रा में उसका पत्रकार मित्र पी०सी० साथ देता है। वह शीघ्र ही पता लगा लेती है कि बंटी की मौत दुर्घटनाजन्य नहीं थी, वरन् उसके शरीर से गुर्दे निकालकर उसकी लाश बराज में बहा दी गई है। बंटी को न्याय दिलाने के मार्ग में अनेक लोग मंजरी को धमकाते हैं ताकि वह सच को न जान पाये। मंजरी धीरे–धीरे सब सबूत जुटा लेती है परन्तु वह अपराधी को सजा नहीं दिला पाती क्योंकि सच का मुख सोने के ढक्कन से ढका हुआ है। पुलिस, प्रेस, न्याय–व्यवस्था, राजनीति, चिकित्सा–विभाग आदि सभी स्थानों पर उसे यही दिखाई देता है कि धन–बल के प्रयोग द्वारा सच को झूठ और झूठ को सच बनाया जा सकता है, सब बिके हुए हैं। कोई भी बंटी प्रकरण में सच

---

1 पाण्डे, मृणाल, रास्तों पर भटकते हुए, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली, सन्–2000, पृ०सं०–30

का साथ नहीं देना चाहता, अंततः वह अकेली ही इस भ्रष्ट तंत्र का सामना करती है।

अतः इस उपन्यास के द्वारा लेखिका ने यह स्पष्ट किया है कि रास्तों की यह भटकन केवल मंजरी की ही नहीं है, यह भटकन वस्तुतः हाशिये की जिन्दगी जी रहे पूरे समाज की भी है और जो लोग उसकी मुक्ति के लिए कुछ कर सकते हैं, वे ही इसे प्रगाढ़, सघन और अभेद्य बनाये जाने के लिए जिम्मेदार हैं।

- **हमका दियो परदेस**

'हमका दियो परदेस' उपन्यास मूलतः मृणाल पाण्डे द्वारा अंग्रेजी में 'द डॉटर्स डॉटर' के नाम से रचित है। हिन्दी भाषा में इसका रूपांतरण मधु बी०जोशी ने किया। उपन्यास का प्रकाशन सन् 2001 में हुआ है। उपन्यास का पूरा ताना–बाना 'टीनू' एवं 'दीनू' दोनों बहनों के इर्द–गिर्द बुना गया है। सौतेली किंतु कभी सौतेलेपन के अहसास से अवगत न हुई, दो बहनों का मानसिक जुड़ाव और टूटन ही उपन्यास का कथा सूत्र है। उपन्यास को सात प्रकरणों में विभक्त किया गया है– अथ मयूर कांड, उड़ने वाला साँप, अब्दुल्ला, हमारी मौसियाँ, हमारा भैया, पेटीकोट की बयार तथा यात्रा। इन प्रकरणों का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है –

प्रथम प्रकरण 'अथ मयूर कांड' में दीनू जो साढे चार वर्ष की है, और उपन्यास की केन्द्रीय पात्र तथा दीनू की सौतेली छोटी बहन 'टीनू' है जो दो वर्ष की है, वे अपनी मौसी के विवाह में अपने ननिहाल अल्मोड़ा जाते हैं। पारिवारिक वातावरण से यह शीघ्र आभास हो जाता है कि लड़के–लड़की का भेद यहाँ पाया जाता है। उनकी मामी के बेटे अनु तथा उनमें असमानता का भाव रखा जाता है, "अलबत्ता कभी–कभार वे अपनी भतीजे के बेटे अनु को, आम की एक टॉफी देकर कृतार्थ करते। हमें वे कभी कुछ ना देते। हम बेटी की बेटियाँ थीं। बहुत हुआ तो हमें देखकर मुस्करा–भर देते।"[1] एक दिन उसकी बहन दीनू को जादुई मोर मिलता है लेकिन बेटे–बेटियों के भेदभाव के कारण न चाहते हुए भी उन्हें वह मोर अनु और शुभा को देना पड़ा। नानी के कस्बे में दो प्रकार के लोग दिखते– साहब लोग, देसी

1 पाण्डे, मृणाल, हमका दियो परदेस, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली, सन्–2001, पृ०सं०–22

लोग। साहब लोग धीर–गंभीर अंग्रेजी उच्चारण, तकल्लुफ भरी बातचीत का ढोंग करते और थ्री पीस सूट पहनते। देसी लोग सादे पहरावे में मिल–जुल कर रहते। माँ और मौसियाँ, नानी सभी पलंगों पर बैठकर बतियाती रहतीं और बच्चे बाग में जी भरकर कच्चे फल खाते, अपनी कल्पनाओं में जीते।

'उड़ने वाला साँप' द्वितीय प्रकरण में लेखिका ने स्पष्ट किया है कि किस प्रकार बच्चों की दुनिया में विचित्र–से घटनाक्रम अथवा अंधविश्वास अपनी पूरी विश्वसनीयता से पकड़ बना लेते हैं। बच्चियों के पिता का तबादला नैनीताल से अल्मोड़ा में नानी के घर के पास ही हो जाता है। जहाँ वे नया घर लेते हैं, वहाँ उनकी माँ को एक उड़ने वाला साँप अचानक दिखाई पड़ता है। माली का मानना है कि वह 'सौ वर्षीय पद्मनाग' था। छोटी बच्ची टीनू ने इसे सत्य घटना के रूप में समझ लिया। दूसरे घटनाक्रम में टीनू रात में 'फ्यू' चिड़िया की आवाज सुनती है जो अनिष्टकारी मानी जाती है। जब उसकी मौसी सड़क हादसे में दुर्घटनाग्रस्त हो जाती है तो इसका कारण बच्ची उसी चिड़िया को मानती है। नानी के घर जाते हैं तो मास्साब उन्हें पढ़ाते और अर्जियाँ लिखनी सिखाते। लेकिन जब भी समय मिलता वे बाहर घूमने निकल जातीं। तभी अचानक जब मौसी आकर माँ का सामान बाँधती है तो उन्हें पता लगता है कि वे नानी के यहाँ कुछ दिन रहेंगी। रात को जब उनकी छोटी बहन होने पर उन्हें मिठाई खिलाई तो नींद में वह कुछ नहीं समझ पायीं लेकिन माँ के रोने आहट सुनकर पता चला कि तीसरी बेटी हुई है। बाद में यह माना जाता है कि 'उड़ने वाला साँप' ही यह बुरा दिन लाया है।

प्रकरण 'अब्दुल्ला' में सौतेली माँ द्वारा किये गये अब्दुल्ला पर अत्याचार और टी०बी० रोग से पीड़ित दीनू की माँ और मामी का वर्णन है। अब्दल्ला की माँ की मृत्यु के पश्चात् उसकी सौतेली माँ उसे प्रताड़ित करती है। वह छोटी बच्ची टीनू को बताता है कि टी०बी० से उसकी मामी मर जाएगी तो उसके मामा जी दूसरी शादी कर लेंगे। दीनू की माँ भी टी०बी० से मरी थी तथा उसके पिता ने दूसरी शादी कर ली थी। बच्ची सोचती है कि बड़े हमेशा मरने की बातें ही करते हैं, उनकी माँ भी प्रायः कहती है कि उनके न रहने पर हम बहुत पछतावा करेंगे। "मैं माँ से पूछती हूँ कि क्या अब उन्हें भी टी०बी० हो जाएगी और वह भी मर

जाएँगी?"[1] इसी समय टीनू के पिता जी का तबादला हो जाने पर वह जगह उन्हें छोड़नी पड़ती है। यह सूचना जब अब्दुल्ला को मिलती है तो वह नाराज हो जाता है कि लड़कियाँ विश्वसनीय नहीं होतीं। प्रतिक्रिया स्वरूप टीनू कहती है, "सिर्फ इस वजह से कि तुम लड़के हो तुम्हें ओछा नहीं बनना चाहिये।"[2]

'हमारी मौसियाँ' प्रकरण में टीनू विवाह योग्य पितृविहीन मौसियों के माध्यम से युवतियों की दुनिया से संपर्क साधती है। उसे आभास होता है कि लड़कियों को सदैव मर्यादा तथा बंधन में रहना आवश्यक है, उन्हें संवेदनशील भी होना चाहिए। विधवा हीरादी अपनी बड़ी होती बेटी सीता को इसलिए ज्यादा मारती है ताकि आगे जीवन में उसे पिटते हुए दिक्कत न आये। नानी भी इस बात का समर्थन करती है। नानी के घर मौसियाँ इसके विपरीत हैं। अमीर होने के कारण मौसियाँ फिल्म देखने जाती हैं, फिल्मी पोस्टरों में देवानन्द–मधुबाला, राजकुमार, नरगिस को देखकर आहें भरती हैं।

प्रकरण 'हमारा भैया' टीनू–टीनू के भाई के जन्म से जुड़ा हुआ है। टीनू की माँ तथा नानी की इच्छा लड़के के जन्म लेने से जुड़ी हुई है। उनके ननिहाल में लड़कियों को महत्त्व न देकर बेटे को ही महत्त्वपूर्ण माना जाता है। जब उनके भाई का जन्म होता है तो घर का वातावरण हर्षोल्लास से भर जाता है। टीनू की छोटी बहन को इसके लिए शुभ माना जाता है, क्योंकि उन्हें लगता है कि वही भाई लेकर आई है, "ये है मेरी लक्ष्मी बेटी', मेरी छोटी बहन को अपनी विराट् छातियों में भींचती नानी कहती हैं, 'यही लाई है अपनी पीठ पर भैया!' .....हमें बताया गया कि मेरे भैया के जन्म की खबर पाकर नानी और हीरादी ने मेरी बहन को बलि की बकरी की तरह चारों पैरों के बल खड़ा करके उसकी 'शुभ' पीठ पर गुड़ की भेली तोड़कर सबका मुँह मीठा करवाया था।"[3] टीनू–टीनू का मन लड़कियों के प्रति परिवारजनों के संकीर्ण दृष्टिकोण से आहत हो उठता है। दोनों रात को बिना खाना खाये ही सो जाती हैं।

---

1 पाण्डे, मृणाल, हमका दियो परदेस, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली, सन्–2001, पृ०सं०–62
2 यथावत्, पृ०सं०–63
3 यथावत्, पृ०सं०–84

'पेटीकोट की बयार' प्रकरण में लेखिका ने स्पष्ट किया है कि किस प्रकार सिनेमा के माध्यम से धीमे–धीमे पतनशील संस्कृति का आगमन हो रहा है। बढ़ती फैशनपरस्ती से युवा–वर्ग प्रभावित हो रहा है। लड़के लड़कियों के पीछे चक्कर काट रहे हैं, उनके लिए खाना–पीना तक छोड़ देते हैं। तारू दा जो टीनू की माँ के रिश्ते का भाई है, उसकी पत्नी मर चुकी है। वह दूसरी शादी नहीं करना चाहता क्योंकि दूसरी पत्नी बेटे से दुर्व्यवहार करेगी, परंतु वह विधवा ब्राह्मणी मानसी से प्रेम करता है। तारू दा के घर में उनकी पत्नी का भूत उन्हें परेशान करता रहता है। नानी के शब्दों में, "इन मर्दुओं को दूध पिलाओ गुलामों की तरह एक टाँग पर खड़े रहकर इनकी चाकरी बजाओ, खिला–पिलाकर छै–छै फुट का कर दो, और फिर फर–फर–फर पेटीकोट की बयार जहाँ लगी और ये छू–मन्तर हुए।"[1]

उपन्यास का अंतिम प्रकरण 'यात्रा' है। इसमें यह व्यक्त किया गया है कि संवेदनशील बालकों के मन तक बड़ों का व्यवहार तुरंत लक्ष्यार्थ होकर पहुँचता है और आत्म–पीड़ित बना जाता है। टीनू–दीनू की माँ पिता की इच्छा के विरुद्ध नानी के घर छुट्टियाँ मनाने जाती हैं। उनके साथ उनका छोटा भाई, छोटी बहन और एक नौकर भी जाता है। माँ को उम्मीद थी कि इस तरह अचानक पहुँचने पर सभी उत्सुकता से चौंक जाएँगे, किंतु हुआ इसके बिलकुल विपरीत। उनके मामा बीमार हैं, उनकी बीमारी पर खर्चा ज्यादा हो चुका है। अनु, शुभा भी उनके आने से ज्यादा खुश नहीं हैं, अंत में उनकी माँ मनीआर्डर से वापिस जाने का खर्चा मंगवा लेती है। नानी के घर रहते हुए दीनू को उसकी मामी भड़काती है कि उसकी माँ सौतेली है जिससे उसके मन में सौतेले बच्चे–सा भाव पनपता है। घर वापिस आने पर बाबू जी (पिता) की व्यंग्यात्मक बातों से उन्हें ननिहाल जाने का अफसोस होता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि उपन्यास में छोटी बच्ची के माध्यम से समाज का वास्तविक चित्र उभर कर सामने आया है। यह बाल–मनोविज्ञान पर आधारित उपन्यास है। इसे आत्मकथात्मक शैली में लिखा गया है। परिवेश और परिवार में बड़ों की पूर्वाग्रहदूषित बातें , अकाल–प्रौढ़त्व प्राप्त बच्चों के मन को प्रभावित करती हैं, यही प्रस्तुत उपन्यास के लेखन के सरोकार हैं।

---

1 पाण्डे, मृणाल, हमका दियो परदेस, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली, सन्–2001, पृ०सं०–96

- **अपनी गवाही**

मृणाल पाण्डे द्वारा 'अपनी गवाही' उपन्यास मूलतः अंग्रेजी भाषा में 'मॉय ऑउन विटनेस' नाम से लिखा गया है। इसका रूपांतरण अरविंद मोहन द्वारा किया गया है। बहुचर्चित उपन्यास का प्रकाशन सन् 2003 में हुआ। मुख्य पात्र कृष्णा के मन में टीस है कि वह अपनी पहचान स्वयं क्यों नहीं बना सकती है? वह समाज में अपना एक अलग मुकाम बनाना चाहती है। अध्यापन का कार्य छोड़ने के पश्चात् कृष्णा को पत्रकारिता का क्षेत्र संभावनाओं से भरा नजर आता है। उसके परिवारजन उसके निर्णय का विरोध करते हैं किंतु कृष्णा अटल रहती है, किन्तु जैसे ही वह इस क्षेत्र में कदम रखती है और एक साधारण रिपोर्टर के रूप में काम शुरू करती है तो 'दूर के ढ़ोल सुहावने' कहावत चरितार्थ होने लगती है। हिन्दी पत्रकारिता की स्थिति अधिक दयनीय थी जहाँ प्रत्येक स्तर पर अवसरवादिता, भ्रष्टाचार, चापलूसी, अकर्मण्यता जैसी बुराइयाँ भी व्याप्त थीं। उसे यह अनुभव होता है कि पत्रकारिता की जड़ों को नेता और अवसरवादी लोग पूरी तरह से दीमक की भाँति नष्ट कर चुके हैं। जहाँ तक अंग्रेजी पत्रकारिता के स्तर का प्रश्न है तो वहाँ भी विड़ंबनाएँ तो हैं किंतु आर्थिक और प्रतिष्ठा की दृष्टि से वह अपेक्षाकृत अच्छी स्थिति में कहा जा सकता है। हिन्दी पत्रकारिता को अंग्रेजी पत्रकार निम्न स्तर का मानते हैं, अपने आप हिन्दी पत्रकारों से एक अघोषित दूरी बनाये रखते हैं। हिन्दी पत्रकारिता केवल नाम मात्र की खानापूर्ति द्वारा जैसे–तैसे अपना अस्तित्व बचाये हुए एक प्रकार–से सिमटकर रह गयी है। वहाँ न तो संसाधन हैं न धन है और न इच्छाशक्ति ही शेष बची है, फिर भी जैसे–तैसे यह 'जुगाड़' जीवित है।

विड़ंबनाओं के उपरांत भी कृष्णा अपने काम में लगी रही और जब वह पत्रिका की सम्पादक बनी तो उसे अपार प्रसन्नता हुई कि अब वह संभवतः कुछ मौलिक कर सकेगी। परंतु कृष्णा जिस मौलिकता एवं मनोवांछित कार्य करने की कामना रखे हुए थी वैसा कुछ नहीं हो पाता। उसे आभास हो जाता है कि प्रबंधकों द्वारा केवल उसे नाम मात्र का ही पद दिया गया है। पत्रिका का दफतर तंग और गंदी तथा सीलन भरी बदबूदार पुरानी इमारत में था जबकि इसी समूह की अंग्रेजी पत्रिका का दफतर नयी इमारत में समस्त आधुनिक सुविधाओं के साथ बना था।

प्रबंधकों द्वारा हिन्दी मीड़िया के साथ किये जाने वाले दोयम दर्जे के व्यवहार से कृष्णा का मन आहत हो जाता है।

इसी क्रम में कृष्णा इस बात से भी परिचित हो जाती है कि आधुनिक परिवेश में मौलिक प्रतिभा के उपरांत भी साहित्यकार स्थापित नहीं हो पा रहे हैं वरन् प्रतिभा का यह क्षेत्र भी प्रभावशाली और ऊँची पहुँच वाले लोगों के अधिकार क्षेत्र में आ गया है और वे अपने परिचितों को अपने प्रभाव द्वारा साहित्याकाश में प्रक्षेपित कर स्थापित कर रहे हैं।

पत्रकारिता के अनुभवों में कृष्णा राजनैतिक गलियारों से भी गुजरती है जहाँ उसे केवल थोथे वादों, कोरी घोषणाओं, झूठ–छल–प्रपंच के ही दर्शन होते हैं। पत्रकार भी राजनीति की चपेट में आ रहे हैं। "यहाँ सच्चाई लिखने बोलने से सब आपके दुश्मन हो जाते हैं और चापलूसी के अलावा और किसी चीज से लाभ नहीं मिलता।"[1] पत्रकार की व्यस्त दिनचर्या के कारण कृष्णा अपने पारिवारिक रिश्तों से भी कट जाती है। अपनी विदेशी बेटियों के लिए वह माँ की वात्सल्यमयी भूमिका न निभाकर एक व्यावसायिक महिला के रूप में ही पेश आती है। जिसका उसे सदैव मलाल रहता है।

इसी बीच एक समारोह में कृष्णा की भेंट हेमलेट और जया से होती है, जो अपने टी०वी० चैनल पर कृष्णा को हिन्दी डेस्क पर कार्य करने का प्रस्ताव देते हैं। कृष्णा के पास चूँकि अब तक कोई विकल्प नहीं था अतः वह चाहते हुए भी प्रिंट मीडिया नहीं छोड़ पायी किंतु जब टी०वी० में जाने का अवसर मिला तो उसने उसे गंवाया नहीं और एक नवीन अवसर मानकर तुरन्त स्वीकार कर लिया। प्रिंट मीडिया के भ्रष्ट तथा अवसरवादी वातावरण से असंतुष्ट होकर दृश्य मीडिया से उम्मीदों के साथ जुड़ी कृष्णा को यहाँ भी परिस्थितियाँ विशेष अनुकूल नहीं मिलतीं। अंग्रेजी डेस्क वालों का हिन्दी डेस्क वालों से दुर्व्यवहार यहाँ भी मौजूद था। भाई–भतीजावाद भी बदस्तूर था ही किंतु हिन्दी डेस्क वालों पर काम का दोहरा बोझ तथा उस पर मालिकों की तानाशाही कृष्णा को भीतर तक बेचैन कर देती है,

---

1 पाण्डे, मृणाल, अपनी गवाही, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली, सन्–2003, पृ०सं०–132

"कृष्णा को लगा कि वह फँस गयी है, और उसे पालतू बनाने का यह काम इतनी बारीकी और तरीके से हुआ है कि अब उसके विरोध का मतलब एकदम ही उल्टा लगाया जाएगा।"[1] जब कृष्णा इस सबके विरुद्ध आवाज उठाने की कोशिश करती है तो हेमलेट और जया इसे 'बगावत' मानते हुए उसे कहते हैं कि यहाँ काम इसी तरह होगा सभी चीजें इसी तरह से रहेंगी, इस पर कोई सार्वजनिक बहस नहीं होगी। यदि बिना कोई प्रश्न उठाये यहाँ काम करना हैं तो स्वागत है, नहीं तो वह अपने लिए कुछ और सोच ले। कृष्णा काम छोड़ने का फैसला ले लेती है। "कृष्णा को लगा कि उसके अंदर कुछ टूट गया है और अब वह किसी काम की नहीं रह जाएगी। उसके पुराने संगी–साथी और मौज–मजे वाली सहेलियाँ भी कहीं छूट गयी थीं। काम का अजीबोगरीब समय और उससे भी ज्यादा अजीबोगरीब काम की प्रकृति ने उन सबको दूर छिटका दिया था। अकसर उसे लगता था कि वह उस स्थान पर है ही नहीं– उसकी जगह कोई प्रेतात्मा बैठी है जो यूँ ही भटकती फिर रही है। वह वहाँ अकेली ऐसी जान थी जो मानती थी कि वह सचमुच कुछ करने आई थी, सिर्फ निर्देशों, आदेशों और गाइडलाइन्स में उलझने नहीं।"[2]

उपन्यास के अंत में कृष्णा उन किस्सों को याद करती है जहाँ उसके नाना तथा धार्मिक रूप से कट्टर नानी ने परिस्थितियों से समझौता करके अपने नितांत कठोर और अटल नियमों को बदल दिया और परिस्थितियों के अनुरूप ढ़ल गये। कृष्णा अपने मित्र तथा कॉलेज के सहपाठी अमोल के दादा जी को भी याद करती है जो बहुत स्वाभिमानी होने के उपरांत भी वृद्धावस्था में उपेक्षित, तिरस्कृत एवं एकाकी जीवन को अपनी नियति मानकर सहज स्वीकार कर लेते हैं। इस प्रकार कथानक के अंत में भागदौड़ भरे जीवन में कृष्णा अपने पति के पास घर में ही सुकून महसूस करती है तथा यह चिन्तन करती है कि पत्रकारिता में कब तक स्वतंत्रता की अभिव्यक्ति का हनन होता रहेगा।

अतः सामाजिक सरोकारों से जुड़ा यह उपन्यास आज के संदर्भ में प्रासंगिक है क्योंकि इसमें वर्णित यथार्थ, विड़ंबनाएँ मात्र काल्पनिक ताना–बाना नहीं हैं वरन्

1 पाण्डे, मृणाल, अपनी गवाही, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली, सन्–2003, पृ०सं०–161
2 यथावत्, पृ०सं०–167

कहीं न कहीं आज के युग सत्य और परिवेश को अनावरित करती कृष्णा की बेबाक 'गवाही' हैं।

समग्रतः मृणाल पाण्डे सफल पत्रकार होने के साथ–साथ संवेदनशील लेखिका भी हैं। उनके लेखन में पत्रकारिता क्षेत्र में अंतःसंघर्ष, वेदना, तटस्थता तथा विद्रूपता की गहरी अभिव्यक्ति भी रहती है। उनके लेखन में एक तीखापन है जिसका आभास उनके कथा–साहित्य के अध्ययन से स्वतः ज्ञात हो जाता है। मृणाल पाण्डे सर्जन और समीक्षा दोनों आयामों पर हिन्दी जगत् को सार्थक और मूल्यवान प्रदेय दे रही हैं। उनकी लेखनी निरन्तर गतिशील है, अनुभवों के साथ वह और भी निखरी है।

3.5.1 कहानियों का अध्ययन एवं विश्लेषण

मृणाल पाण्डे मुख्यतः गद्य लेखिका है। उपन्यास साहित्य की भाँति इनका कहानी–संसार भी समृद्ध है। इन्होंनें विविध सरोकारों पर आधारित सात कहानी–संग्रह प्रस्तुत किये हैं।

'दरम्यान' 'शब्दवेधी', 'एक नीच ट्रैजेडी' और 'एक स्त्री का विदागीत', कहानी संग्रह जो क्रमशः सन् 1978, 1980, 1981 तथा 1985 में प्रकाशित हुए थे, इन संग्रहों में संकलित समस्त कहानियों के सहित सन् 1990 तक मृणाल पाण्डे द्वारा जितनी भी कहानियों की रचना की गयी उन्हें मिलाकर दो संग्रहों 'यानी कि एक बात थी' तथा 'बचुली चौकीदारिन की कढ़ी' में पुनर्प्रकाशित किया गया। तत्पश्चात् सन् 1995 में 'चार दिन की जवानी तेरी' कहानी–संग्रह प्रकाशित हुआ। मृणाल पाण्डे ने अपनी कहानियों के आधार पर बहुत कम समय में प्रसिद्धि प्राप्ति की तथा कथाकारों की श्रेणी में अद्वितीय स्थान प्राप्त किया। इनकी कहानियों की अनूठी प्रभाव क्षमता का कारण है, उसमें निहित गहन संवेदना और अनुभवों से सम्पन्न एवं प्रभावशाली चित्रण। लेखिका की कहानियाँ पारम्परिक लीक से हटकर अपनी अलग पहचान बनाती हैं। उन्होंने अपने देशकाल, परिवेश एवं विड़म्बनाओं को लक्ष्य बनाया है। कथ्य और शिल्प की विशिष्टता के कारण ये कहानियाँ सर्वथा उल्लेखनीय हैं। लेखिका की कहानियों में भावनाओं का अतिरेक कहीं भी नहीं है। इसीलिए वह

कृत्रिमता से बच पायी हैं। एक पत्रकार की तीक्ष्ण तथा विश्लेषणात्मक दृष्टि ने लेखिका को अनावश्यक भावनात्मक वर्णन में विलोपित होने से बचाया है। इसी कारण इनकी कहानियों में न तो स्त्री–पुरुष सम्बन्धों की ओट में छिपे जुगुप्सापूर्ण वर्णन हैं न कहीं रूमानियत के संसार का विस्तार है, भावनाओं की बाढ़ यहाँ नहीं उमड़ती न कोई नायिका विरह की आग में जलती है। इन्हीं विशेषताओं के कारण लेखिका की कहानियाँ अपने आप में विशेष बन गयी हैं। समकालीन दौर की ये कहानियाँ आम इंसान के संघर्ष पूर्ण जीवन की दस्तावेज हैं और संघर्ष अनेकानेक स्तर पर हो रहा है। एक ओर सामाजिक मान्यताओं और तद्जनित स्थितियों से संघर्ष है तो दूसरी ओर आर्थिक संघर्ष भी है। समकालीन समाज का आम आदमी चाहे वह स्त्री हो या पुरुष, हर क्षण द्वन्द्वों से अपने आपको घिरा ही पाता है। इसीलिए उससे जुड़ी कहानियों में विविध एकाधिक पहलू स्वतः ही सम्मिलित हो जाते हैं।

प्रस्तुत शोध अध्ययन में 'यानी कि एक बात थी', 'बचुली चौकीदारिन की कढ़ी' तथा 'चार दिन की जवानी तेरी' कहानी–संग्रहों में संकलित कहानियों को आधार बनाया गया है, जिनका विश्लेषण इस प्रकार है–

- **यानी कि एक बात थी**

प्रस्तुत कहानी–संग्रह राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली से प्रकाशित हुआ है। इसमें 'दरम्यान' तथा 'शब्दवेधी' दोनों कहानी–संग्रहों तथा अन्य नयी लिखी कहानियों को एक जिल्द में ले लिया गया है। ये मात्र परिवर्धित संस्करण है। इस कहानी–संग्रह में कुल 28 कहानियाँ हैं। डॉ० पुष्पपाल सिंह ने इस कहानी–संग्रह के विषय में लिखा है, "संग्रह की कहानियों को पढ़ते हुए यह सहज ही स्पष्ट हो जाता है कि प्रत्येक कहानी पर खूब मेहनत की गई है। कथ्य को संप्रेषित करने के लिए, मन के रोयें–रेशे को पूर्णतः उघाड़ने के लिए अभिव्यक्ति के स्तर पर मृणाल की कहानियों में एक महीन तराश है।"[1] प्रस्तुत कहानी–संग्रह की प्रथम कहानी 'कोहरा और मछलियाँ' है। कहानी का परिवेश पारिवारिक है, जिसमें अति आधुनिक माँ

1 सिंह, पुष्पपाल (डॉ०), कहानी का उत्तर समय : सृजन संदर्भ, सामयिक बुक्स, नई दिल्ली, सन्–2013, पृ०सं०–324

उसका पति तथा उनकी दो बेटियाँ रति और बानो हैं। माँ के अन्तर्मुखी किंतु संवेदनशील बेटी 'रति' के साथ वैचारिक मतभेद हैं। माँ का फिल्मी अतीत है, जिसे वह मौजूदा जीवन में भी बनाये रखना चाहती है, बेटियाँ इसका विरोध करती हैं। पति प्रसिद्ध लेखक है परन्तु कैंसर से पीडित है, वह अपने पति की मरणासन्न स्थिति पर भी पत्रकारों को इंटरव्यू देते हुए अपने व्यक्तिगत प्रचार का अवसर तलाश करती है, "पापा को थामे ममी ढेर–सी तस्वीरें खिंचवातीं, पापा को सूप पिलाते हुए ..... पापा का हाथ थामे उनकी आँखों में झाँकते हुए.....। फिर वही तस्वीरें पत्रिकाओं में छपतीं– ममी के अज्ञात पातिव्रत्य पर पुष्टि की मुहर।"[1] रति की बहन बानो इस परिवेश से अपने को अलग कर विदेश चली जाती है परंतु रति अपनी माँ के इस व्यवहार से मन ही मन दुःखी होती है तथा प्रतिक्रिया स्वरूप वह अंतर्मुखी एवं अवसाद ग्रसित बन जाती है। कहानी में भूषी अंकल हैं जो रति की माँ की ओर आकर्षित हैं। कहानी में लेखिका ने प्रतीकों और बिम्बों के माध्यम से यह स्पष्ट किया है कि 'कोहरा' अपने आसपास, चारों ओर का विषाक्त और दूषित परिवेश है एवं 'मछलियाँ' हैं रति तथा बानो जो इस कोहरे में से निकल जाने के लिए छटपटा रही हैं।

आत्मवृतांत रूप में लिखी कहानी 'ढलवान' में नायिका अपनी महत्त्वाकांक्षाओं के कारण दायरों में सिमटी हुई है। कहानी में मुख्य पीड़ा यही है कि स्त्री–जीवन एक ऐसा ढलवान है जिस पर संभलकर ठहरना और ठहरकर अपने निर्णय स्वयं कर पाना लगभग असंभव है। 'समुद्र की सतह से दो हजार मीटर ऊपर' तथा 'यानी कि एक बात थी' कहानियाँ भी नारी–जीवन का वृतांत हैं। 'समुद्र की सतह से दो हजार मीटर ऊपर तक' कहानी की नायिका एक प्रख्यात नृत्यांगना थी। विवाहोपरांत उसने अपनी कला का त्याग कर दिया तथा पति, बच्चों के साथ देश–विदेश घूमती रही। अन्ततः पैंतीस वर्ष की गृहस्थी व्यतीत करने पर उसे ज्ञात होता है कि वह स्वयं क्या है? उसका वजूद किसमें समाहित है? वह अपना अन्तर्मन टटोलती है, "कहाँ–कहाँ–कहाँ है मेरा वह मनोरम संसार? मेरी आवाज मेरे ही भीतर

---

1 पाण्डे, मृणाल, कोहरा और मछलियाँ (कहानी–संग्रह : यानी कि एक बात थी), राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली, सन्–1990, पृ०सं०–14

बजती है। मेरी विक्षप्तता का शून्य, मेरा उजाड़.....।"[1] कहानी के अंत में उसमें नवीन ऊर्जा एवं चेतना का संचार होता है जिससे वह अपने जीवन को विवाह तथा बच्चों के अलावा एक अलग दिशा देना चाहती है। इसी प्रकार कहानी 'यानी कि एक बात थी' में दो पात्र हैं 'स्त्री' और 'पुरुष'। आपस में दाम्पत्य सम्बन्ध से जुड़े पात्रों में, स्त्री पात्र को लेखिका ने महत्त्वाकांक्षा से भरा है, उसमें स्वतंत्र पहचान बनाने की कामना को जगाया है। पन्द्रह वर्ष की लम्बी अवधि के पश्चात् पति–पत्नी मिलते हैं। उस समय वह अपने पति द्वारा उसके साथ किये गये बुरे व्यवहार को भुलाना चाहती है परन्तु तभी वह आत्मसजग हो उठती है, "मैं न तो ढाँपी जाना चाहती हूँ, न उघाड़ी जाना। मैं अपनी उस बेडौल सतत् धैर्यवान, सतत् क्षैतिज परछाईं समेत सीधी–सतर गरदन उठाये सड़क के इस पार से उस पार तक जाना चाहती हूँ।"[2] वह अपने पति के झूठे प्रेम–प्रसंग में न पड़कर अपना मार्ग स्वयं तलाश करती है।

मृणाल पाण्डे ने प्रस्तुत कहानी–संग्रह में विदेश–प्रवास के जीवन की विवशताओं को भी 'कगार पर', 'दरम्यान', तथा 'दोपहर में मौत', 'अँधेरे से अँधेरे तक' कहानियों के द्वारा प्रस्तुत किया है। 'कगार पर' कहानी का नायक विष्णु अपनी अमेरिकन पत्नी मिली और दो बेटों–मैथ्यू तथा एलैक के साथ रहता हुआ एक बेगानेपन, जिन्दगी में भौतिकतावादी दृष्टि से सब कुछ पाकर भी सब कुछ या बहुत कुछ खो जाने, भारतीय मूल्यों के टूटने और छूटने से छटपटा रहा है। अपने घर की आर्थिक विवशताएँ उसे वहाँ रोके हुए हैं, "दरअसल चंद मामूली–से डरों के खूँटों पर टंका था। एक तरफ बीवी की नाखुशी का डर, बच्चों के सामने फसाद मचाने का डर, बीवी के घरवालों की हिकारत का डर, और दूसरी तरफ पाँच सौ रुपल्ली की नौकरी पर दस्तखत बन जाने का डर। एक अभावग्रस्त पारिवारिक जिंदगी के बैलचक्कर का डर और दिन–रात रिश्तेदारी की झिक–झिक, क्या यह सब इस लायक था कि सारी टूटनों और खामियों को समझदारी से ढँकते–ओढ़ते

---

1 पाण्डे, मृणाल, समुद्र की सतह से दो हजार मीटर ऊपर (कहानी–संग्रह : यानी कि एक बात थी), राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली, सन्–1990, पृ०सं०–164

2 पाण्डे, मृणाल, यानी कि एक बात थी, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली, सन्–1990, पृ०सं०–256

एक वफादार पति और समझदार बेटे का रोल निभाओ? छिः, थू है।"[1] वह दिन–प्रतिदिन छीज रहा है। उसकी पत्नी मिली की अमरीकी पद्धति की अपनी ही बंदिशें और अनुशासन–संहिता है। वह अपने नौ वर्षीय बेटे मैथ्यू के कमरे में स्वतन्त्रतापूर्वक नहीं जा सकता और न ही उसे सिगरेट पीने से रोक पाता है। उसके बच्चों में कहीं–न–कहीं यह अपराध–बोध तथा हीनताबोध भी है कि उनके डैडी 'इंडियन' हैं। मिली फ्रॉयड तथा स्पॉक जैसे मनोविश्लेषकों के मतानुसार बच्चों की दिनचर्या निर्धारित कर उन्हें विष्णु से दूर कर देती है। तनावग्रस्त विष्णु अपने छुट्टी के दिन का प्रारम्भ भी शराब पीकर करता है। भारत से आये किसी परिचित तथा सम्बन्धीजन का वह नाम तक नहीं सुनना चाहता क्योंकि उसे भय बना रहता है कि वे उससे पैसे उधार न माँग लें। विष्णु तथा मिली की घर–गृहस्थी धीरे–धीरे डगमगाने लगती है। मिली बच्चों को लेकर, घर छोड़कर अपनी माँ के साथ रहने लग जाती है। तनावग्रस्त विष्णु नींद की बहुत अधिक गोलियाँ खाकर अपनी जीवन–लीला समाप्त कर लेता है। उसकी मौत की खबर सुनकर केवल मिली की माँ की आँखें नम होती हैं। कहानी 'दरम्यान' भी प्रवासी जीवन की विड़म्बनाओं को उजागर करती है। कहानी में मनोहर तीन बहनों का इकलौता भाई है। वह विदेश में नौकरी करके अपने परिवार का आर्थिक सहारा बनता है। परिवार की दृष्टि में वह वहाँ आराम का जीवन बसर कर रहा है। परन्तु मनोहर की स्थिति वहाँ ऐसी है कि वह पग–पग पर समझौता केवल अपने परिवार की आर्थिक दुर्दशा के कारण कर रहा है। कहानी में पात्र बिहारी भी है जो पारिवारिक जिम्मेदारियों के होते हुए भी बेपरवाह जीवन व्यतीत कर रहा है। अतः मनोहर के द्वारा लेखिका ने मध्यवर्गीय परिवार के युवक की तड़प तथा पीड़ा को सशक्तता से उभारा है। 'दोपहर में मौत' कहानी एक और कोण से इस प्रवासी जीवन से वितृष्णा उपजाती है, जहाँ जवान बेटे रघु की विदेश में मौत हो जाती है तथा माता–पिता के लिए यह खबर सामान्य–सी बनकर रह जाती है। माता–पिता अपने मरे बेटे की बहू जीनी तथा

---

1 पाण्डे, मृणाल, कगार पर (कहानी–संग्रह : यानी कि एक बात थी), राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली, सन्–1990, पृ०सं०–104

उसकी बेटी से मिलने विदेश नहीं जाते क्योंकि वहाँ जाने पर पैसा बहुत खर्च होगा। प्रस्तुत कहानी में व्यंग्य की मार तब और अधिक तीखी होकर सामने आती है, जब इतने बड़े हादसे से गुजर कर भी पिता इंजीनियर बने अपने छोटे बेटे माधव से कहता है, "गो वैस्ट यंगमैन (नौजवान! पश्चिम जाओ) ये लाइफ भी कोई लाइफ है, क्या नाम, रोते–सिसकते कतारों में घिसटते हुए दिन काटना। यहाँ दो हजार पाकर भी अधपेट रहोगे – फिर बहन की भी तो शादी करनी है।"[1] रघु के नाम पर जो घर, जायदाद है उसके माता–पिता, उसकी पत्नी को न देकर अपने वश में करना चाहते हैं। अतः कहानी में अर्थ के वर्चस्व ने सम्बन्धों को जहाँ महत्त्वहीन बताया वहीं प्रवासी जीवन स्थितियाँ भी इससे गंभीर रूप से प्रभावित होती हैं। 'अंधेरे से अंधेरे तक' कहानी में भी माता–पिता के लिए प्रवासी बेटा धन का कुबेर है। वह विदेश में अनेक संकटों एवं परिस्थितियों से गुजरता है परन्तु परिवार वाले उसका महत्त्व केवल अर्थ के आधार पर ही तौलते हैं।

भारतीय समाज में भी अर्थ की प्रधानता को व्यक्त करती कहानियाँ 'चिमगादड़ें', 'दुर्घटना' तथा 'लकीरें' हैं। 'चिमगादड़ें' कहानी में अपाहिज विधवा माँ अगाथा तथा उसकी दो बेटियाँ – मारिया तथा सोनिया हैं। तीन पात्रों पर आधारित इस कहानी में परिवार आर्थिक तंगहाली से गुजर रहा है। घर जर्जर हो रहा है, साथ–ही–साथ माँ तथा बेटियों के आपसी सम्बन्ध भी। माँ का स्वभाव बेहद कंजूस और चिड़चिड़ा है। वह अपनी बेटियों की जरूरतों को भी पूरा नहीं कर पाती। सोनिया नौकरी करती है जिसकी धौंस वह पूरे परिवार पर जमा कर रखती है। वह अपना कमाया पैसा अपने पास ही रखती है। तीनों माँ–बेटियों में सदैव झगडा होता रहता है। 'दुर्घटना' कहानी में घर का बड़ा बेटा पढ़ लिखकर एक अमीर लड़की से शादी कर लेता है तथा अपने मध्यवर्गीय परिवार से दूरी बना लेता है। एक दिन उसीकी गाड़ी के नीचे आकर उसका पिता मर जाता है परन्तु बेटे को इससे कोई सरोकार नहीं है। कहानी 'लकीरें' में माँ अपनी बेटी को घर की आर्थिक दुर्दशा से अवगत कराती रहती है। उस पर किये जाने वाले छोटे–छोटे खर्चों को भी वह

1 पाण्डे, मृणाल, दोपहर में मौत (कहानी–संग्रह : यानी कि एक बात थी), राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली, सन्–1990, पृ०सं०–248

लिखकर रखती है। बेटी का मन इससे बहुत दुःखी रहता है जिसके कारण उसका व्यक्तित्व क्षीण हो जाता है जहाँ न उमंग है न उत्साह। कहानी 'औऽर' में भी आर्थिक विषमताओं से जूझते मध्यवर्गीय परिवार की अभिव्यक्ति की गई है।

प्रस्तुत कहानी–संग्रह में लेखिका ने उच्च वर्ग के 'पार्टी–कल्चर' को व्यंग्यात्मक रूप में उघाड़ा है। 'चेहरे', 'शब्दवेधी', 'मीटिंग' कहानियाँ इस दृष्टि से बहुत अच्छी बन पड़ी हैं। समाज में आदमी कैसे–कैसे कितने चेहरे रोज बदलकर उपस्थित होता है, इसे 'चेहरे' कहानी में मिसेज कंपानी के माध्यम से दर्शाया गया है। वह बुद्धिजीवी वर्ग की पार्टी में बौद्धिक चेहरा लगाकर जाती है। अब डिनर में जाने के लिए वह 'तलाकशुदा औरत' का चेहरा लगाए या माँ का अथवा 'शोख छोकरी का' या फिर 'अपनी शादीवाला कुलवधू' का यह उसकी भारी समस्या है। घर में मिस्टर कंपानी की वृद्ध माँ भी है जो एकाकीपन की पीड़ा से जूझ रही है। 'शब्दवेधी' कहानी में भी ऐसी ही पार्टियों के भदेस व्यवहार पर उंगली रखी गई है। रात्रि भोज पर एकत्रित संभ्रांत अभिजातीय प्रशासकीय वर्ग अपने वार्तालाप में जहाँ देश की सरकार द्वारा चलायी गई आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक एवं धार्मिक नीतियों पर शब्दों के बाण चलाता है वहीं स्वार्थी, प्रदर्शनप्रिय एवं आडम्बरपूर्ण व्यवहार द्वारा यह सिद्ध करने का प्रयास भी करता है कि वे ही देश के ईमानदार अधिकारी हैं तथा देश उन्हीं से प्रगति कर रहा है। 'मीटिंग' कहानी में भी दिखावटी परिवेश की मनोवैज्ञानिक अभिव्यक्ति है, जहाँ कार्यक्षेत्रों में काम कम और वाद–विवाद अधिक होता है।

प्रस्तुत कहानी–संग्रह में दर्ज 'कैंसर' कहानी में मृत्यु के नजदीक दामोदर का सम्बन्धों के खोखलेपन को झेलना बहुत पीड़ादायक है। बीमारी के समय सुरजी तथा दामोदर एक–दूसरे का सहारा हैं। दामोदर के कैंसरग्रस्त होने पर कोई भी परिवारजन उसका सहारा नहीं बनता। परिवार के समस्त जन संयुक्त कुटुम्ब में से अपना–अपना हिस्सा लेकर चले जाते हैं। संयुक्त परिवार के बिखराव पर आधारित यह कहानी मानवीय सम्बन्धों की संवेदनहीनता की करुण कथा को मार्मिकता से बयान करती है। कहानी 'नुक्कड़ तक' रामदयाल बुजुर्ग पात्र पर आधारित है। रामदयाल का एकाकीपन बार–बार उसको अतीत की स्मृतियों में खींचकर ले जाता

है। कहानी के अंत में वह घर को त्याग कर किसी अज्ञात स्थान पर जाकर साधू बन जाता है। लेखिका की यह कहानी बुजुर्गों का परिवेश से मोहभंग होने को दर्शाती है। 'व्यक्तिगत' कहानी परिवार में रहते हुए भी अजनबीपन लिए हुए सदस्यों पर आधारित है। परिवार में तीन सदस्य हैं माता–पिता तथा उनका बेटा। तीनों एक–दूसरे से कटे–कटे से हैं। पत्नी पति के लिए तथा बेटा बाप के लिए अजनबीपन लिए हुए हैं, "आखिर बाबा के बारे में वह जानता ही क्या था? सिवा एक संशय–भरे आतंक के, जो शायद माँ के माध्यम से बह–बहकर उसकी नसों में न जाने कब से जमता जा रहा था। उस आतंक और संशय के परे क्या है, यह उसने कभी जानने की कोशिश ही नहीं की।"[1] मशीनी शहरी जीवन की शुष्क संवेदनाओं को 'प्रेत–बाधा' कहानी में अभिव्यक्त किया गया है।

'शरण्य की ओर' कहानी स्त्री–पुरुष सम्बन्धों पर आधारित है। यह कहानी पालित, उर्मि तथा विजया के इर्द–गिर्द घूमती है। तीनों जंगल की सैर पर चले जाते हैं। पालित तथा उर्मि का सम्बन्ध पति–पत्नी की तरह है परन्तु दोनों के सम्बन्धों में मनमुटाव का दौर भी चल रहा है। जंगल में पालित विजया की ओर आकर्षित होता है परन्तु विजया एक आत्मसजग लड़की है, वह प्रेम के नाम पर किसी प्रकार का कोई भ्रम नहीं रखना चाहती और अपने रागात्मक लगाव के बावजूद केवल पुरुष के सुख–संतोष हेतु एक माध्यम मात्र बनकर इस्तेमाल किये जाने के विरोध में दृढ़ता से उठ खड़ी होती है। कहानी 'गर्मियाँ' आत्मकथात्मक शैली में रचित है जिसमें नारी–जीवन को दोपहर की गर्मी की भाँति चित्रित किया गया है। कहानी में बेटी स्वतन्त्र विचारों द्वारा स्वयं अपना भविष्य संवारना चाहती है वहीं माँ उसे वास्तविक जगत् से परिचय कराकर उसका मार्ग प्रशस्त करने हेतु आवश्यक दिशा निर्देश समयानुसार देती रहती है। यह कहानी माँ–बेटी के सम्बन्धों पर आधारित है, "हिन्दुस्तानी घर के किस कोने में तुम माँ से छिप सकती हो, जरा कहो तो? तम जिधर कहीं भी भागोगी, वह वहीं खड़ी मिलेगी। दरवाजा भेड़ दो, तो दरवाजे के नीचे से उसकी उपस्थिति पोस्टकार्ड की तरह सरकती भीतर चली

1 पाण्डे, मृणाल, व्यक्तिगत (कहानी–संग्रह : यानी कि एक बात थी), राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली, सन्–1990, पृ०सं०–35

आयेगी, बाहर निकलकर देर से लौटो, तो भी रात गये तुम्हारी ठंडी थाली पर लाल–लाल आँख–नाक लिये वह ऊँघती बैठी मिलेगी।"[1] कहानी 'आततायी' संयुक्त परिवार के स्नेहपूर्ण सम्बन्धों पर आधारित है। परिवार दादा–दादी, ताऊ–तायी, चाचा–चाची से भरा–पूरा है। घर में ताऊ जी का दब–दबा है। सभी उनकी आज्ञा का पालन करते है। परिवार का बड़ा बेटा नरेश विदेश में पढ़ने जाता है वह वहीं जर्मन लड़की से शादी कर लेता है यद्यपि घरवालों ने उसके लिए एक अमीर घराने की लड़की भारत में पसन्द कर रखी थी। परिवार ने नरेश की जर्मन पत्नी को सहर्ष अपनाया तथा उसे भारतीय रीति–रिवाज, परम्परा, खान–पान आदि को भी सिखाया। नरेश की बहू स्वयं को धीरे–धीरे भारतीय आदर्शों के अनुरूप ढाल लेती है। इस कहानी में पुरानी पीढ़ी तथा नयी पीढ़ी का सामंजस्य भी दिखाया गया है।

कहानी 'धूप–छाँह' माँ–बेटे के ऊष्माहीन सम्बन्धों पर आधारित है। बेटा कभी–कभी अपनी असहाय विधवा माँ को देखने आता है। माँ ने अपने पास तिलुवा नामक बालक को रखा हुआ है, तिलुवा गरीब है तथा उसकी सौतेली माँ उस पर अत्याचार करती है जिसके कारण वह घर नहीं जाना चाहता। वृद्धा का बेटा जब अपनी माँ से मिलने आता है तो तिलुवा ही भोजन, जल–पान की व्यवस्था करता है। बेटा जब वापिस लौटता है तो वृद्धा नम आँखों से उसे विदाई देती हुई पुनः अकेली हो जाती है, "वे अभी भी धूप के उस टुकड़े पर निगाह टिकाये वैसी ही बैठी थीं। उनके शांत चेहरे पर बौद्ध भिक्षुणियों के चेहरों की तटस्थ अंतर्मुखी समयहीनता थी....।"[2] कहानी 'तुम वह और वे' विवाह–पूर्व एवं विवाहेतर सम्बन्धों को प्रस्तुत करती है। जिसमें विवाहित युवती का मिलन विवाहोपरांत अपने प्रेमी हर्ष से होता है। वह अपनी वैवाहिक सीमाओं को समझते हुए अपनी दबी अपूर्ण कामनाओं को अपने पति के समक्ष प्रकट नहीं होने देती।

'रूबी', 'बर्फ' 'खेल' कहानियाँ बाल–मनोविज्ञान पर आधरित हैं। 'रूबी' कहानी में रूबी की माँ अपने असन्तुष्ट वैवाहिक जीवन से अवसादग्रस्त है। वह

---

1 पाण्डे, मृणाल, गर्मियाँ (कहानी–संग्रह : यानी कि एक बात थी), राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली, सन्–1990, पृ०सं०–212

2 पाण्डे, मृणाल, धूप–छाँह (कहानी–संग्रह : यानी कि एक बात थी), राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली, सन्–1990, पृ०सं०–72

अनेक बार आत्महत्या का भी प्रयास कर चुकी है। वह रूबी को भी घर से बाहर निकलने नहीं देती। आस–पड़ौस के बच्चे उनके घर पर आकर ही रूबी के साथ खेल सकते हैं। रूबी की माँ का उग्र व्यवहार रूबी को मानसिक रूप से प्रभावित करता था। यह कहानी पति–पत्नी के आपसी तनाव से बाल–मन को पहुँचती ठेस को भी अभिव्यक्त करती है। 'बर्फ' कहानी में भी जब माता–पिता का झगड़ा होता है तब तीनों बच्चे सहमकर घर के एक कोने में दुबक जाते हैं। 'खेल' कहानी में भी यही स्थिति चित्रित है, जहाँ बच्चे खेल–खेल में अपने घर के तनावपूर्ण सम्बन्धों का खुलासा सहजता तथा भोलेपन से प्रकट करते हैं। बेमेल विवाह जैसी सामाजिक त्रासदी को 'कौवे' कहानी में दर्शाया गया है। भारतीय और पाश्चात्य सामाजिक परिवेश के टकराव के कारण एक परिवार का बिखर जाना तथा उसमें नन्ही बच्ची का माँ और पिता में से कभी एक के पास कुछ दिन रुकना तथा कभी दूसरे के पास रुकना, इस स्थिति को मार्मिक बना देता है। कहानी में गीजेला अमरीकी युवती है तथा उसका पति भारतीय, दोनों का तलाक हो जाता है। अदालत के आदेशानुसार बच्ची अपने पिता को केवल सप्ताह के अंत में ही मिल सकती है। अतः पति–पत्नी के आपसी सम्बन्ध बच्चों के मनोमस्तिष्क पर गहरे से असर डालते हैं।

अतः मृणाल पाण्डे की कहानियों का यह प्रथम खण्ड उनके कहानी–लेखन के विकास–क्रम को तो सूचित करता ही है, साथ–ही–साथ उन्हें श्रेष्ठ कथाकार की श्रेणी में भी खड़ा करता है।

- **बचुली चौकीदारिन की कढ़ी**

प्रस्तुत कहानी–संग्रह में कुल 19 कहानियाँ हैं। यह कहानी–संग्रह राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली से प्रकाशित हुआ है। कहानी–संग्रह की प्रथम कहानी 'बिब्बो' है। यह कहानी आधुनिक कहलाने वाले समाज की संकीर्ण मानसिकता को उद्‌घाटित करती है। बिब्बो गाँव की युवती है। वह गरीब परिवार से सम्बन्ध रखती है। वह गाँव से शहर में नौकरानी के तौर पर लायी जाती है। जिस घर में वह काम करती है, उसकी मालकिन फैशनप्रस्त एवं आधुनिक विचारों से युक्त है।

मालिक–मालकिन आस–पास के लोगों से बिब्बो का परिचय अपने घर के सदस्य के रूप में करवाते हैं न कि नौकरानी के रूप में। उनका मानना है कि नौकर भी इंसान होते हैं, हम घर में भेदभाव नहीं रखते। वे लोगों को यह भी बताते हैं कि, "उन्होंने पिछले शहर में बिब्बो को एक ब्यूटीशियन से ट्रेनिंग भी दिलवायी थी, ताकि उसे एक और हुनर आ जाये।"[1] बिब्बो को आधुनिक बनाने के प्रयास में घर का काम–काज अधूरा रह जाता। बिब्बो अब आस–पडौस के घरों में ब्यूटीशियन का काम करने लग गई। घर की मालकिन चिड़चिडी बन चुकी थी, पूरा घर बिखरा रहता। मालिक–मालकिन अपने आजाद ख्याल तथा वक्तव्यों के कारण मौन रहते, वे उसे चाहकर भी निकाल नहीं पाते। तभी बिब्बो के घर से उसके पिता जी का लिखा पत्र आता है जिसमें लिखा है कि उसके लिए फौज में लगा हुआ लड़का देख लिया है तथा उसके साथ उसका विवाह निश्चित है। मालिक–मालकिन तुरन्त उसका सामान बाँधकर उसे वापिस गाँव भेज देते हैं ताकि उनको उससे मुक्ति मिल सके। अतः 'बिब्बो' कहानी में रोचकता के साथ–साथ व्यंग्य को भी सार्थकता से निभाया गया है।

'पितृदाय' कहानी पिता–पुत्र के बदलते सम्बन्धों की दास्तान है। उमेश नामक युवक विदेश में रहता है। पिता के बीमार होने पर वह भारत लौटता है। अपने पिता जी की सेवा वह तन–मन–धन से करता है। उसकी बहन सुमति भी अमरीका में रहती है। उसका पति जैफरी नशेड़ी है, उसके साथ दुर्व्यवहार करता है। वह चाहकर भी भारत लौट नहीं सकती क्योंकि उसके पिता ने सख्त शब्दों में मना कर दिया कि अमरीका जैसे सुन्दर देश को छोड़कर यहाँ आने पर उसे कुछ नहीं मिलेगा। पिता के स्वभाव की यह अक्खड़ता उन्हें अपने परिवार से दूर ले जाती है। वे पाश्चात्य संस्कृति के भक्त हैं। उमेश अपने पिता की बीमारी को ठीक करने के लिए हरसंभव प्रयत्न करता है परन्तु पिता जीवन के अन्त तक उसे घृणा की दृष्टि से ही देखता रहता है, उसके प्रति पिता का अपमानित एवं तिरस्कृत रवैया उसके मन में आक्रोश भर देता है, इसलिए कहानी के अंत में वह स्वयं को

---

1 पाण्डे, मृणाल, बिब्बो (कहानी–संग्रह : बचुली चौकीदारिन की कढ़ी), राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली, सन्–1990, पृ०सं०–12

एवं पिता को धिक्कारता है, "सात समंदर पार से मरने को यहीं आना था तुम्हें? जन्म–भर मुझे नफरत से देखा, फिर मेरे ही मत्थे मरने आये। ठंडा हुआ जी तुम्हारा मेरा अपमान कराके? .....पहले अपनी ऐंठ से घुला–घुलाकर माँ को मारा, फिर लड़की की गृहस्थी चूस खायी, अब मुझे खा लो। मरते भी नहीं कि पिंड छूटे हमारा।"[1] अतः सम्बन्धों में आपसी तालमेल एवं अपनेपन की न्यूनता के कारण दूरियाँ पैदा हो जाती हैं।

'कुत्ते की मौत' कहानी मनुष्य की अमानवीय क्रूर प्रवृत्ति को उजागर करती है। जीवन में यदि इंसान से चूक हो जाये तो माफी दी जा सकती है परन्तु जानवर को नहीं। लालू कुत्ता अपनी मालकिन के हाथ पर काट लेता है। तभी परिवार के लोग डॉक्टर के परामर्शानुसार उसे टीका लगवाकर मरवा देते हैं, उनका मानना है, "अरे कुत्ता हो तो कुत्ते की औकात में रहे। कुत्ता भी आदमी जैसा तुनकमिजाज हो जाये तो हम लोग पालतू बनाकर किसे रखेंगे, है कि नहीं।"[2] कहानी के द्वारा लेखिका ने जीव हत्या को अमानवीय माना है। मृणाल पाण्डे ने 'प्रतिशोध' कहानी में यह अभिव्यक्त किया है कि व्यक्ति जैसा बाहर से दिखाई देता है, वैसा उसका भीतर मन नहीं होता। कहानी में मधुसूदन बाबू की भी यही विशेषता है। मधुसूदन बाबू अधेड उम्र का पुरुष है। वह अपने से आधी उम्र की लड़की दमयन्ती से प्रेम करने लग जाता है। दमयन्ती तथा उसके परिवारजनों को इस बात का आभास नहीं है। मधुसूदन को जब यह ज्ञात होता है कि दमयन्ती दूसरे शहर जाकर महाविद्यालय में नौकरी करने जा रही है तो वह महाविद्यालय की प्राचार्या को पत्र लिखकर दमयन्ती के चरित्र को अश्लील सिद्ध करता है। वह चाहता है कि दमयन्ती को नौकरी से निकाल दिया जाये। इस प्रकार से समाज में आदर्श, संस्कृति, अनुशासन एवं परम्पराओं की दुहाई देने वाला मधुसूदन बाबू अपने निजी स्वार्थ की बात आते ही सच्चरित्र नारी पर दुष्चरित्र होने का झूठा आरोप मढ़कर उसके भविष्य पर प्रश्न चिह्न लगाने में भी नहीं हिचकिचाता।

---

1 पाण्डे, मृणाल, पितृदाय (कहानी–संग्रह : बचुली चौकीदारिन की कढ़ी), राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली, सन्–1990, पृ०सं०–30

2 पाण्डे, मृणाल, कुत्ते की मौत (कहानी–संग्रह : बचुली चौकीदारिन की कढ़ी), राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली, सन्–1990, पृ०सं०–36

'एक नीच ट्रैजेडी' कहानी विविध सरोकारों से सम्बद्ध है। कहानी में कथानायिका सुधा है। सुधा की सहेली पुष्पिन्दर अर्थात् पुसी है। पुसी के पारिवारिक वातावरण के द्वारा लेखिका ने समाज में स्त्री की उस स्थिति को उजागर किया है जिसमें सामन्ती लोग अपने ऐशो–आराम तथा भोग–विलास के रूप में स्त्री का उपयोग करते हैं। "आये दिन उसके पिता या चाचा किसी–न–किसी नौकर या कर्मचारी को बेबात धुन डालते थे या उनकी बीवियों पर हाथ डाल देते थे। ....पुसी की माँ जब–जब मर्दों पर 'फितूर' सवार होता तो फार्म से दूर शहर के बँगले में शिफ्ट कर जपजी साहिब का अखंड पाठ, गलीचों की सफाई–सुफाई वगैरा, कुछ करवा लेती। इधर 'फितूर' फार्म से विदा होता, उधर वे वापस पहुँच जातीं। 'औरत हमारे घर में जूती तो है, पर जरा पालिश–पुलिशवाली।' पुसी ठहाका मारकर हँस पड़ती।"[1] कहानी में 'क' चाचा तथा सुधा के माता–पिता के द्वारा पीढ़ीगत अंतराल के कारण उत्पन्न परिस्थितियों के विषय में भी चर्चा की गई है। इसके अतिरिक्त सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, शैक्षणिक परिवेश की त्रासदी की ओर भी संकेत दिये गये हैं। कहानी में बदलते मानवीय सम्बन्धों पर भी दृष्टिपात किया गया है। कहानी 'दूरियाँ' में भी सम्बन्धों की टूटन–दरकन को बारीकी से विश्लेषित किया गया है। बेटा बड़ा होकर अपना घर बसाकर अलग हो जाता है तथा बेटी विवाह के पश्चात् माँ–बाप से वह आत्मीय सम्बन्ध नहीं रखती जो उसके कुंवारे रहते हुए था। एक बेटी कुंवारी है, उसकी उम्र अधिक हो चुकी है परंतु परिवार के आर्थिक हालात खराब होने के कारण उसका विवाह नहीं हो पा रहा। अतः पूरी कहानी पारिवारिक परिवेश में व्याप्त नैराश्य एवं अपनत्व के अभाव को व्याख्यायित करती है। 'हमसफर' कहानी असमय विधवा हुई निर्मला तथा उसके पुत्र मुन्ना के इर्द–गिर्द घूमती है। पति की मृत्यु के पश्चात् निर्मला को ससुराल वाले बहुत परेशान करते हैं तथा उसे मायके जाने पर मजबूर कर देते हैं। माँ–बेटा पुरुष प्रधान समाज में दैन्य और आतंक–भरा जीवन व्यतीत करने हेतु विवश हैं। माँ अपने बेटे को स्वाभिमानी बनाना

---

1 पाण्डे, मृणाल, एक नीच ट्रैजेडी (कहानी–संग्रह : बचुली चौकीदारिन की कढ़ी), राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली, सन्–1990, पृ०सं०–57

चाहती है ताकि वह लोगों की दया का पात्र न बने। पारिवारिक सम्बन्धों के बदलते संदर्भों को भी कहानी में सूक्ष्मता और कुशलता से उरेहा गया है।

प्रस्तुत कहानी–संग्रह की 'रिक्ति' कहानी माँ–बेटी के आत्मीय सम्बन्धों को प्रकट करने के साथ–साथ ही उस खालीपन को भी उभारती है जो दोनों के जीवन में व्याप्त है। माँ के जीवन में पति तथा बेटी को पिता की अनुपस्थिति का आभास दैनिक दिनचर्या में पग–पग पर होता है। कहानी 'लेडीज' उच्चवर्गीय महिला द्वारा दम्भ स्वरूप की जाने वाली समाज–सेवा को प्रदर्शित करती है। बेटा सुनील अपनी माँ को बार–बार यह समझाता है कि अधिकांश लोग उनकी सेवा को अमीरों द्वारा दी गयी खैरात समझते हैं। माँ को इस बात का आभास तब होता है जब गरीब औरत द्वारा उसके मुँह पर तमाचा जड दिया जाता है, वह स्पष्टतः कहती है, "ये भीख–भूख देनी हो तो जाके अपनों को दे। हमारे बच्चों से परे रह।"[1] गरीब औरत सुनील की माँ को सख्त शब्दों में समझाती है कि गरीब का भी स्वाभिमान होता है।

कहानी 'एक स्त्री का विदागीत' वृद्ध सावित्री के जीवन से जुड़ी हुई है। सावित्री विधवा है। उसकी आज्ञाकारिणी बहुएँ–बेटे और बेटियाँ–दामाद हैं। पूरा घर खुशहाल है। सावित्री के अचानक बीमार हो जाने पर उसका ऑपरेशन किया जाता है, ऑपरेशन के बाद ही उसकी मृत्यु हो जाती है। मृत्यु की आशंका से सावित्री का मन भयभीत हो उठता है जिसका सुन्दर मनोविश्लेषणात्मक वर्णन कहानी में किया गया है। इसके अतिरिक्त कहानी में पहाड़ी–जीवन, शिक्षित पीढ़ी के माध्यम से बदलाव की प्रक्रिया और उस बदलाव से सम्बन्धों पर पड़ते प्रभाव को मार्मिक रूप से चित्रित किया गया है।

'कुनू' कहानी स्त्री–विमर्श से जुड़ी हुई है। बालिका कुनू नारी स्वातन्त्र्य की पक्षधर है। घर में उसकी माँ लोक–मर्यादा के नाम पर अनेकों बंदिशें उसके खान–पान, रहन–सहन तथा वेशभूषा को लेकर लगाती है। उसकी माँ का मानना है, "वह सयानी हो गई है..... और सयानी लड़कियों की खिड़कियाँ रात को बंद ही

---

1 पाण्डे, मृणाल, लेडीज (कहानी–संग्रह : बचुली चौकीदारिन की कढ़ी), राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली, सन्–1990, पृ०सं०–186

भली।"[1] कुनू के मन में आक्रोश का स्वर भर उठता है। वह परम्परागत नियमों–बंधनों को तोड़ना चाहती है। कहानी 'परियों का नाच ऐसा' भी नारी–जीवन से जुड़ी हुई अनूठी रचना है, जिसमें विशुद्ध रूप से स्त्रियों की दुनिया में विचरण कर उनकी परिहासप्रियता को दर्शाया गया है।

'प्रेमचन्द : जैसा कि मैंने उन्हें देखा' कहानी में प्रेमचन्द जयंती पर आयोजनों की निस्सारता, इनमें प्रकट किये गये वाष्पोद्‌गार, साहित्यकारों का टुच्चा व्यवहार, जिसमें वे प्रेमचन्द जैसे महान् कलाकार को अपनी ओछी प्रवृत्ति द्वारा 'कैश' करने की कोशिश करते हैं, को नग्न करने का सफल प्रयास लेखिका ने किया है। 'जगह मिलने पर साइड की जायेगी उर्फ तीसरी दुनिया की एक प्रेम कथा' कहानी में महानगरीय जीवन की भाग–दौड़ में विलुप्त होती मानवीय संवेदनाओं तथा युवा–वर्ग की विकृत मानसिकता, पीढ़ीगत अंतराल से बढ़ता तनाव आदि मुद्‌दों की यथार्थाभिव्यक्ति हुई है।

'लक्का–सुन्नी' कहानी बाल–मनोविज्ञान पर आधारित है। यह कहानी बच्ची अमृता के इर्द–गिर्द घूमती है, जिसका पालन–पोषण उसकी नानी करती है। अमृता की माँ लिली जिद्‌द करके बाहर पढ़ने गई तो वहाँ बिना बताए एक नाकारा बंगाली युवक से ब्याह कर लिया, जो नशे का आदी था। दोनों में तनावपूर्ण सम्बन्धों के कारण तलाक हो जाता है। लिली अवसाद के घेरे में आ जाती है तथा कैंसर से उसकी जीवन–लीला समाप्त हो जाती है। अमृता मानसिक रोगी बन जाती है, स्नेहाभाव के कारण वह एक काल्पनिक दुनिया में रहने लग जाती है जिसमें लक्का और सुन्नी उसके दो मित्र हैं वह उनसे बतियाती– खेलती रहती है। उसकी नानी उसके लिए सदैव चिन्ताग्रस्त रहती है। अतः माता–पिता के आपसी सम्बन्ध बच्चों की मानसिकता पर बहुत प्रभाव डालते हैं। 'लेडीज टेलर' कहानी एक शिक्षिका के करुणामयी जीवन पर आधारित है। वह अविवाहित है। समाज द्वारा उसके चरित्र पर लांछन लगाये जाने पर एक दर्जी द्वारा उसकी अस्मिता की रक्षा की जाती है।

---

1 पाण्डे, मृणाल, कुनू (कहानी–संग्रह : बचुली चौकीदारिन की कढ़ी), राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली, सन्–1990, पृ०सं०–107

कहानी 'चार नम्बर सुनहरी बागलेन' में लेखिका ने आलीशान, भव्य कोठियों में रहने वाले अमीर लोगों का जीवन कितना नीरस, शुष्क एवं त्रासदीमय होता है, इसका यथार्थ अंकन किया है। कहानी में कथानायिका की सहेली रत्ती के भाई के माध्यम से विकृत व्यवस्था के कारण किस प्रकार से युवा–वर्ग हतोत्साहित हो जाता है, उसका भी मार्मिक वर्णन मिलता है। 'एक थी हँसमुख दे' कहानी स्त्री–पुरुष सम्बन्धों की दास्तान को रेखांकित करती है। हँसमुख को परिवार में यही सिखाया जाता है कि पुरुषसत्तात्मक व्यवस्था में स्त्री दासी है तथा उसे अपने मालिक के आदेशानुसार ही कार्य करना होता है। हँसमुख कहानी में रोचकतापूर्ण एवं व्यंग्यात्मक संवादों द्वारा पुरुष समाज के समक्ष अनेक प्रश्न चुनौती स्वरूप पेश करती है।

संग्रह की अंतिम कहानी, जिसके आधार पर संग्रह का नामकरण तय हुआ है, वह है– 'बचुली चौकीदारिन की कढ़ी'। यह कहानी बुजुर्ग बचुली आमा तथा उसके पोते सुरिया के आत्मीय सम्बन्धों की मार्मिक अभिव्यक्ति है। जिसमें यह संदेश निहित है कि इस संसार में औरत ही है जो अपनी भूख को छिपाकर बच्चों का पेट भरती है।

अतः मृणाल पाण्डे द्वारा रचित इन कहानियों में मानव–जीवन की विषमताओं पर प्रहार है, नारी ह्रदय का चीत्कार है, युवा पीढ़ी की विवशताओं के ठहाके हैं और व्यापक दृष्टिकोण वृत्ति है।

- **चार दिन की जवानी तेरी**

'चार दिन की जवानी तेरी' कहानी–संग्रह सन् 1995 में राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली से प्रकाशित हुआ है। प्रस्तुत कहानी–संग्रह में कुल 11 कहानियाँ संग्रहीत हैं।

कहानी–संग्रह की प्रथम कहानी 'लड़कियाँ' उन लड़कियों की कहानी है जो समाज में व्याप्त लड़के–लड़कियों के भेदभाव का विरोध करती दिखाई देती हैं। लड़के का इंतजार करते–करते माँ तीन लड़कियों को जन्म दे चुकी है और चौथी बार भी लड़के की इच्छा में माँ बनने वाली है। नानी के घर में रहते हुए लड़कियों

को यह आभास हो जाता है कि लड़की की तुलना में लड़के ही समाज में महत्त्वपूर्ण हैं। इस मानसिकता का विरोध करते हुए छोटी लड़की अष्टमी के दिन कन्या–पूजन के समय उठकर चली जाती है तथा स्पष्टतः कहती है कि जब समाज लड़की को हेय दृष्टि से देखता है तो उसकी पूजा देवी के रूप में क्यों की जाती है। इस प्रकार इस कहानी के माध्यम से लेखिका ने एक प्रासंगिक प्रश्न को उठाया है।

कहानी 'एक पगलाई सस्पेंस कथा' नारी–मनोविज्ञान पर आधारित है। कहानी की नायिका विष्णुप्रिया है। जो मानसिक रूप से विकृत हो जाती है। वह बाल्यकाल से ही मातृत्व–प्रेम से वंचित है, जिसे वह एक जर्मन कुत्ते के पिल्लों तथा नौकरानी बाहरिया में ढूँढने का प्रयास करती है। जब बाहरिया उसे यह बताती है कि उसका विवाह होने जा रहा है तो रात्रि में विष्णुप्रिया उसे जहरीली दवा पिलाकर मार देती है क्योंकि उसका विवाह हो जाने पर वह अकेली हो जाती। रिश्तेदार विष्णुप्रिया का विवाह एक हकले फौजी से कर देते हैं किन्तु जीवन में अपनत्व, प्रेम एवं स्नेह का अभाव उसे अकेलेपन की ओर धकेल देता है। अन्ततः वह आत्महत्या कर लेती है। कहानी का कथ्य दुखांत है।

कहानी 'उमेश जी' भ्रष्ट आचरण का मर्मांतक रूप उजागर करती है। कथानायिका मध्यवर्गीय गरीब परिवार से सम्बन्ध रखती है। परिवार आर्थिक अभाव से गुजर रहा है। वह नौकरी की तलाश में एक प्रतिष्ठित नेतानुमा व्यक्ति उमेश जी से मिलने के लिए उसके दफ्तर में जाती है। दफ्तर में इंतजार करते हुए युवती को अनेक प्रकार की उपेक्षाओं और जलाजत भरी स्थितियों का सामना करना पड़ता है किंतु परिवार की उम्मीदों के कारण वह सब कुछ सहन करने पर विवश हो जाती है। लम्बे इंतजार के बाद उमेश जी आते हैं तो उसे घर आने को कह कर टरका देते हैं। विवशता के कारण न चाहते हुए भी उसे उनके घर जाना पड़ता है। जहाँ अनेक चापलूसों से घिरे उमेश जी उसे मिलते हैं। वह अनेक उम्मीदों से उमेश जी से मिलने आती है। वह उसकी विवशताओं का फायदा उठाकर उसके साथ दुराचार करने का प्रयास करते हैं, युवती की आर्थिक विषमता उसे कुछ भी बोलने नहीं देती। वह उसकी हवस का शिकार बन जाती है। यह कहानी कामकाजी महिलाओं के प्रति आये दिन होने वाले कुत्सित आचरण को उघाड़ती है।

'कर्कशा' कहानी बेमेल विवाह से उत्पन्न विसंगतियों की गाथा है। नायिका भग्गो का विवाह एक नाकारा एवं नपुंसक व्यक्ति से कर दिया जाता है। पति–पत्नी में नित्य प्रति क्लेश, मारपीट के कारण घर बिखर जाता है। आर्थिक विषमताओं को झेलते हुए भाग्य की विड़म्बनाओं में तिल–तिलकर तड़पती भग्गो की त्रासदी को मार्मिकता के साथ दर्शाया गया है। काल्पनिक होते हुए भी कहानी का कथानक पूरी तरह यथार्थवादी है। अतः एक स्त्री के विडम्बनामय जीवन की हृदय–स्पर्शी अभिव्यक्ति प्रस्तुत कहानी में हुई है।

कहानी 'सुपारी फुआ' में फुआ के विधवा होने पर उसके ससुराल वाले सम्पत्ति से बेदखल कर देते हैं, मायके में आकर अपने परिजनों के बीच भी उन्हें भारी उपेक्षा झेलनी पड़ती है। मृणाल पाण्डे ने सुपारी फुआ के विषय में लिखा है, "जितनी बार घर की सम्पत्ति के बँटवारे हुए, फुआ उनका हिस्सा बनीं। एक बँटवारे में फुआ यहाँ से वहाँ भेज दी जाती, दूसरे में वहाँ से यहाँ। एक तो हर खेप में दो–चार दयावती, लायक बहुएँ निकल ही आतीं, फिर फुआ खाती भी बहुत कम थीं, और सोती और भी कम। एक कोने की दरकार भर थी उन्हें। जहाँ भी वे जातीं अपने काम से काम रखतीं।"[1] अंततः भरे–पूरे परिवार में उसे एकाकीपन भोगते हुए मरना पड़ता है। यह कहानी समाज में बुजुर्गों की उपेक्षित स्थिति पर व्यंग्य प्रहार करती है।

'अब्दुल्ला' कहानी का कथानक परम्परागत कथानकों से कुछ अलग हटकर लिखा गया है। जिसमें एक निम्नवर्गीय बच्चे अब्दुल्ला की पीड़ा और उसके परिवेश को चित्रित किया गया है। अब्दुल्ला अपनी सौतेली माँ और पिता के चिड़चिड़े व्यवहार के कारण उपेक्षा का शिकार हो जाता है। काम के बोझ के चलते वह स्कूली पढ़ाई के साथ सामंजस्य नहीं बिठा पाता। निरन्तर प्रताड़ना तथा तिरस्कार के चलते उसके मन में एक ग्रंथि जन्म ले लेती है। जिसका प्रदर्शन उसकी बातों तथा व्यवहार से होता रहता है। अब्दुल्ला की बातें उसकी उम्र की तुलना में कुछ अधिक गंभीर और विचारात्मक प्रतीत होती हैं। अब्दुल्ला की सहपाठी और कहानी

---

1 पाण्डे, मृणाल, सुपारी फुआ (कहानी–संग्रह : चार दिन की जवानी तेरी), राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली, सन्–1995, पृ०सं०–80

की दूसरी बाल चरित्र उसकी बातें सुनती तो है किंतु समझ नहीं पाती। वह अब्दुल्ला की बातों से डरती भी है और उनको सुनना भी चाहती है। एक प्रकार से वह अब्दुल्ला के दुःख की अघोषित हिस्सेदार बन जाती है तथा इस बाल सखी के सन्निध्य से अब्दुल्ला को भी राहत मिलती थी। परन्तु जब पिता के तबादले के कारण उस बाल सखी को वह शहर छोड़ना पड़ता है तब अब्दुल्ला बेहद नाराज हो जाता है तथा उससे एक दूरी बना लेता है, उसके चले जाने के बाद वह एक खत उसे लिखता है, "खत में अब्दुल्ला ने सिर्फ एक शेर लिखा था, जिसका मतलब कुल मिलाकर था कि अमीरों से गरीबों की दोस्ती नहीं हो सकती, जैसे कि कागज के फूलों से खूशबू नहीं आ सकती।"[1] इस प्रकार अब्दुल्ला के दुःख उसी तक सीमित रह जाते हैं और कहानी का एक मार्मिक अंत हो जाता है।

कहानी 'मुन्नूचा की अजीब कहानी' में मुन्नूचा अमरीका में रहते हैं। उनकी पत्नी का स्वर्गवास हो जाता है। परम्परागत भारतीय धार्मिक मान्यतानुसार वे उसकी आत्मा की शांति के लिए धार्मिक विधि–विधान सम्पन्न करने के लिए अपने देश लौटते हैं। जब उनकी स्वयं की भी मृत्यु होती है तब भी वे मरने से पहले ही पैसे गाँव के कर्मकाण्डी के पास भिजवा देते हैं ताकि उनकी मौत के समस्त संस्कार तथा आत्मा की मुक्ति हो सके। अतः यह कहानी मुन्नूचा के प्रवासी होने पर भी भारतीय संस्कृति, धर्म तथा परंपराओं के साथ भावनात्मक स्तर पर जुड़े होने का प्रमाण देती है।

कहानी 'हिर्दा मेयो का मँझला' में समकालीन भ्रष्ट व्यवस्था एवं भ्रष्टाचार पर करारा व्यंग्य किया गया है। हिर्दा मेयो अपने एडीटर मित्र के घर आने पर उसके समक्ष राजनीतिक विसंगतियों, आर्थिक दुर्दशा तथा बेरोजगारी पर काफी लम्बी चर्चा करता है। उसके दोनों लड़के बेरोजगार हैं जिसके कारण वे आवारा इधर–उधर घूमते रहते हैं। कहानी वर्तमान समाज की सचबयानी को स्वर प्रदान करती है। लेखिका की 'बीज' कहानी में भी पहाड़ी परिवेश की विकृत होती आर्थिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों का अंकन करने के साथ–साथ पहाड़ी युवाओं का अपने

---

1 पाण्डे, मृणाल, अब्दुल्ला (कहानी–संग्रह : चार दिन की जवानी तेरी), राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली, सन्–1995, पृ०सं०–91

परिवेश से मोहभंग की स्थिति को भी व्यक्त करना है। कहानी 'विष्णुदत्त शर्मा के लिए एक समकालीन नीति कथा' में व्यंग्य–शैली द्वारा विश्व गरीबी की पड़ताल करती एक बैठक का परिवेश अंकित किया गया है। जिसमें यह दर्शाया गया है कि वातानुकूलित कक्षों की बैठकों में केवल निर्णयहीन दिखावा बौद्धिक जुगाली ही होता है जिसकी कोई सार्थकता नहीं होती।

प्रस्तुत कहानी–संग्रह की अंतिम कहानी 'चार दिन की जवानी तेरी' पत्रकारिता जगत् की विसंगतियों को उद्घाटित करती है। अखबार के दफ्तर का परिवेश अराजक बना हुआ है। कहानी का नायक कर्मठ युवक है परन्तु कार्यालय के लोग उसे भी अकर्मण्य बनने का परामर्श देते हैं। जिससे उसमें निराशा का भाव पैदा हो जाता है। मृणाल पाण्डे स्वयं हिन्दी पत्रकारिता से जुड़ी हुई हैं, अतः इस कहानी को उनके जीवन का प्रामाणिक चित्र तो समझना ही चाहिए।

इस प्रकार मृणाल पाण्डे के प्रस्तुत कहानी–संग्रह की कहानियों में जिस यथार्थवादी परिवेश का चित्रण किया गया है वह कहीं न कहीं हमारे वर्तमान का, हमारे ही परिवेश का अभिन्न अंग है।

3.6 समकालीन सामाजिक परिदृश्य एवं मृणाल पाण्डे

परिवेश में बदलावों का आना एक निरन्तर विकासशील प्रक्रिया है। परिवेश ने जहाँ एक ओर नवीन संस्कृति को जन्म दिया है, वहीं दूसरी ओर व्यक्ति–सोच को नयी दिशा भी प्रदान की है। नूतन उपभोक्तावादी संस्कृति से आच्छादित परिवेश में भारतीयता की सारी मान्यताएँ, परम्पराएँ और मूल्य विखंडित हो गए हैं।

पारिवारिक भूमिकाओं के परिप्रेक्ष्य में समकालीन परिदृश्य में पर्याप्त परिवर्तन दिखाई देते हैं। कभी "परिवार समाज का अविच्छिन्न हिस्सा कहलाता था, पर आज वह हिस्सा मुख्य अंग का एक समन्वित भाग न होकर, धारा के बीच का एक द्वीप बन गया है। परिणाम यह है कि मुख्यधारा इसे सींचने–सहलाने का काम कम, जोड़ने, काटने और ढहाने–घटाने का काम ज्यादा कर रही है।"[1] संयुक्त परिवारों की परिणति एकल परिवारों के रूप में होने लगी है। परिवार में बुजुर्ग तिरस्कार एवं

1 सिंह, शिवप्रसाद, आधुनिक परिवेश और नवलेखन, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, सन्–1970, पृ०सं०–35

एकाकीपन का संताप भोगने के लिए बाध्य हैं। मध्यवर्ग का व्यक्ति सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक मोर्चे पर संघर्ष करने लगा है। अब यह संघर्ष केवल बाह्य नहीं रह गया बल्कि भावनात्मक स्तर पर भी आरम्भ हो गया है। अलगाव, अकेलापन, मानसिक तनाव, अन्तर्द्वन्द्व, असुरक्षा का भय लोगों के सामने है। प्रेम के प्रति रोमानी, भावुकतापूर्ण तथा त्यागवादी दृष्टिकोण पूर्णतः बदलकर मात्र यथार्थवादी हो गया है। प्रेम तथा विवाह के विषय पर लोगों की प्राचीन मान्यता बदलने लगी है। आज विवाह जन्म–जन्मांतर का बंधन न होकर समझौते पर आधारित व्यवस्था बन चुका है। प्रेम–विवाह, अन्तर्जातीय विवाह का प्रचलन तेजी से बढ़ रहा है। स्त्री–पुरुष के पर–सम्बन्धों को नैतिक माना जाने लगा है एवं यौन–सम्बन्धों में भी खुलापन आ गया है। उन्मुक्त एवं स्वच्छन्द जीवन–यापन के कारण व्यक्ति ग्लैमर, चकाचौंध से भरी दुनिया की ओर आकर्षित होने लगा है। सिगरेट, शराब, कैबरे, पार्टियाँ, स्मैक, ड्रग्स समकालीन समाज का 'स्टेटस सिंबल' बन गया है।

पश्चिम से आयातित विचारधारा एवं चिन्तन जिसके प्रणेता सार्त्र, नीत्शे, मार्क्स, एड़लर, फ्रायड़, युंग आदि हैं, उन्होंने हमारी दिनचर्या को परिवर्तित कर दिया है। भाग्यवाद, पूजा–पाठ, अंधविश्वास एवं जन्म–जन्मांतर आदि जैविक प्रक्रिया के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं रह गए। आज मानव स्वर्ग–प्राप्ति की कल्पना में निमग्न नहीं है। विज्ञान और नवीन शास्त्रों के कारण सत्य की सही व्याख्याएँ जैसे–जैसे सामने आ रही हैं, परम्परागत 'सत्य', 'असत्य' में परिणत होते जा रहे हैं। भैंरूलाल गर्ग का मानना है, "अब हम इस नतीजे पर पहुँच गये हैं कि हमनें जिसे सत्य कहकर पुकारा था वह ज्ञान की सीमा थी, और न जानने की मजबूरी थी।"[1] मनुष्य ने वैज्ञानिक धरातल पर धर्म को नापना–तोलना आरम्भ कर दिया है। समकालीन समाज में यह तनाव निरन्तर बढ़ता जा रहा है। "अनेकता में एकता का नारा लगाने वाला भारत 'विश्वमानव' तथा 'वसुधैव कुटुम्बकम्' को भी स्वीकार करता है, परन्तु आज भारत की संपूर्ण मानसिकता में तनाव, आतंक और

1 गर्ग, भैंरूलाल, स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी कहानी में सामाजिक परिवर्तन, चित्रलेखा प्रकाशन, इलाहाबाद, सन्–1979, पृ०सं०–75

विश्वासहीनता समा गई है।"[1] समकालीन राजनीतिक व्यवस्था सिद्धान्तहीन बन गयी है। आज यह अर्थ–सत्ता का हिस्सा बनकर रह गयी है। राजनीतिक दलों पर पूँजीपतियों और उद्योगपतियों का प्रभाव स्पष्टतः परिलक्षित होता है। उन्हीं के अनुसार देश की आर्थिक नीतियाँ तय होती हैं, इससे बाजार तथा विदेशी निवेश इस देश की ज़मीनी हकीकत बन गये हैं। वैश्वीकरण तथा उदारीकरण ने पूँजीवादी व्यवस्था की जड़ें मजबूत की हैं। वैश्वीकृत बाजार भयावह विच्छिन्नता का बाजार है। यह बाजार जहाँ एक ओर अपने उत्पादों के माध्यम से उपभोक्ता को आकर्षित करता है वहीं उससे उचित एवं अनुचित का विवेक भी छीन लेता है। वैश्वीकरण ने केवल विभिन्न राष्ट्रों की भौगोलिक सीमाओं का विलय ही नहीं किया है वरन् संस्कृति का एक भयंकर संकट भी उनके समक्ष उत्पन्न कर दिया। यह संस्कृति को अपसंस्कृति की ओर ले जा रहा है।

समकालीन पटल पर सूचना क्रांति का बोलबाला है। जिससे पूरा विश्व एक ग्लोबल गाँव बन गया है। दूरियाँ नजदीकियों में बदल गई हैं। परिवर्तित परिवेश में मास मीडिया सबसे बड़े 'हब' के रूप में उभरा है। मीडिया के कारण दूर–दराज के गाँव सीधे न्यूयार्क, लन्दन, पेरिस से जुड़ गये हैं। पत्रकारिता के पुराने मानदण्ड इसने तोड़ दिये हैं जो कि त्याग एवं समाज कल्याण पर आधारित थे। आज यह व्यवसाय का पर्याय बन गया है। समाज के धनाढ्य, प्रतिष्ठित उद्योगपति या नेता–लोग अपनी स्वार्थ सिद्धि हेतु इसका प्रयोग अधिक करते हैं। परिणामतः 'पेड न्यूज' (Paid News) का चलन आरंभ हो गया है। जब कोई पूँजीपति अथवा नेता किसी अपराध से जुड़ता है तो पुलिस तथा समाचार–पत्र उनके दबाव में आकर सच को उजागर नहीं करते अपितु उनका समाचार पूँजीपतियों की थैली की छलनी से छनकर निकलता है।

समकालीन परिदृश्य में एक बात महत्त्वपूर्ण रूप से विचारणीय है कि ऊँच–नीच, वर्ण, जाति–पाँति, गोत्र के बंधन ढीले पड़ने लगे हैं और मानव–मात्र में समानता का भाव बढ़ने लगा है। यह भी विचारणीय है कि अब जातियों,

---

1 एलडबम, विजयलक्ष्मी (डॉ०), समकालीन हिन्दी उपन्यास : समय से साक्षात्कार, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली, सन्–2006, पृ०सं०–20

जनजातियों, अल्पसंख्यकों या आँचलिक समूहों में क्षेत्रीयता की भावना अधिक पनपने लगी है। इस बात के भी प्रमाण हैं कि प्रजातांत्रिक और धर्मनिरपेक्ष शक्तियाँ ताकतवर होने लगी हैं। देश में जो शिक्षा–पद्धति प्रचलित है वह धर्मनिरपेक्ष है। पहले जहाँ निम्न जातियों को शिक्षा प्राप्त करने के अधिकारों से वंचित रखा जाता था। वहाँ आज सभी जाति के बच्चों को समान रूप से शिक्षा ग्रहण करने का अधिकार प्राप्त है। उन्हें अनेक प्रकार की सुविधाएँ दी जा रही हैं। नाना प्रकार के अनुसंधान कार्यों को प्रोत्साहित किया जा रहा है। स्त्रियों के सबलीकरण की तरफ कदम बढ़ रहे हैं। त्याग एवं बलिदान की प्रतिमूर्ति कहलाने वाली नारी आधुनिक साँचे में ढल रही है। नवीन आकांक्षाओं से ओत–प्रोत स्त्री के इस रूप ने पुरुष के साथ उसके सम्बन्धों के मानदण्ड बदल दिये हैं। समकालीन परिवेश में वह शोषण के विरुद्ध कसमसाने से आगे बढ़कर आवाज बुलन्द करने लगी है। आज उसे दया–भाव या कृपा–भाव की आवश्यकता नहीं है, वह इतनी पुख्ता जमीन पर खड़ी है कि उसे तुलनात्मक दृष्टि से कहीं भी हीनता बोध की अनुभूति नहीं है।

समकालीन पटल पर परिवर्तन एवं संघर्ष का दौर है। जिसका परिणाम है– नवीन मान्यताएँ, नवीन स्थापनाएँ, नये आदर्श, नये मूल्य अर्थात् नया समाज। साहित्य भी इसका अपवाद नहीं है। साहित्य समकालीन परिस्थितियों से साक्षात्कार कराता है एवं बिना किसी पूर्वाग्रह के समय के सच को पूरी ईमानदारी से उद्‌घाटित करता है। आज सामाजिक सारोकारों को अभिव्यक्त करने के लिए पुरुष ही नहीं महिला लेखिकाएँ भी अपनी भूमिका निभा रही हैं। अस्सी के दशक में हिन्दी कथा–साहित्य परम्परा से जुड़ी मृणाल पाण्डे ने भी समकालीन कथा लेखिकाओं के स्वर को और अधिक आस्था एवं दृढ़ता से आगे बढ़ाया है। वह जिस समय सृजन के क्षेत्र से जुड़ीं, तब युगीन परिस्थितियाँ भी तेजी से करवट ले रही थीं और इन्हीं अनुभवों से प्रभावित होकर उनके भीतर का साहित्यकार अपने भावों, तेवरों को शब्दाभिव्यक्ति देता चला गया।

मृणाल पाण्डे समकालीन परिवेश एवं मूल्यों से अनुप्राणित लेखिका है। उनके कथा–साहित्य में स्थितियाँ जिस प्रकार की हैं उनकी वैसी ही स्वाभाविक सपाट अभिव्यक्ति भी है। मृणाल पाण्डे ने अपने साहित्यिक विचारों को इन शब्दों में प्रकट

किया है, "हर कहानी या उपन्यास घटनाओं–पात्रों के जरिए सत्य से एक आंशिक और कुतुहल भरा साक्षात्कार होता है। साहित्य हमें जीवन जीना सिखाने के बजाय टुकड़ा–टुकड़ा 'दिखाता' है, वे तमाम नर्क–स्वर्ग, वे राग–विराग, वे सारे उदारता और संकीर्णता–भरे मोड़, जिनका सम्मिलित नाम मानव–जीवन है। जो साहित्य उघाडता है, वह अंतिम या सार्वभौम आदर्श नहीं, बहुस्तरीय यथार्थ होता है। हाँ, यदि जीवन में आदर्श या सत्य अनुपस्थित या अवहेलित है, तो उस विड़म्बना को भी वह जताता जाता है। मेरी तहत साहित्य को रचना, परोक्ष रूप से सत्य से आंशिक साक्षात्कारों की ऐसी ही एक श्रृंखला पाठकों के लिये तैयार करना होता है, जिसके सहारे एक सहृदय व्यक्ति अपनी चेतना, अपनी संवेदना और अभिव्यक्ति की क्षमता का सहज ही कुछ और विस्तार होता पाए। चिंतनपरक लेख और रचनात्मक लेखन के बीच का फासला तर्कसंगत ज्ञान और संवेदनात्मक समझ के बीच का फासला है।"[1] मृणाल पाण्डे का लेखन यथार्थपरक है। उनकी रचनाओं के विषयों में समसामयिक विडम्बनाओं की पड़ताल करना, सामाजिक के मानसिक द्वन्द्वों को खोजकर उन्हें अभिव्यक्ति प्रदान करना एवं उस चिन्तन को दिशा देना है जो सत्य से साक्षात्कार के बाद घटित होता है। उनके उपन्यास 'विरुद्ध' की रजनी, 'हमका दियो परदेस' की टीनू समकालीन सामाजिक परिवेश में संघर्ष करते हुए उनका अन्वेषण तथा विश्लेषण करती हैं। उनका उपन्यास 'पटरंगपुर पुराण' आजादी से पूर्व तथा पश्चात् की सभी परिस्थितियों को उजागर करता है जिनका प्रभाव समकालीन परिदृश्य पर आज भी देखा जा सकता है। मृणाल पाण्डे ने अपने लेखन में समकालीन समाज की भूमि से अपना 'रस' खींचा है तथा यह प्रामाणित हुआ 'निठारी बाल हत्याकाण्ड' के उजागर होने के बाद। पूरे राष्ट्र को झकझोर कर, इंसानियत को कंपकंपा देने वाला यह काण्ड जब प्रकाश में आया तब बरबस ही देश के पाठक वर्ग के मानस में मृणाल पाण्डे का उपन्यास 'रास्तों पर भटकते हुए' कौंध गया। यह स्वाभाविक ही था क्योंकि उपन्यास में पात्र 'बंटी' की मौत के माध्यम से वही समस्त स्थितियाँ व्यंजित हो चुकी थीं जो निठारी काण्ड से

---

1 पाण्डे, मृणाल, यानी कि एक बात थी (कहानी–संग्रह), राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली, सन्–1990, आवरण पृष्ठ से उद्धृत

आश्चर्यजनक रूप से समानता रखती हैं। इस बाल हत्याकाण्ड की पूर्वध्वनि 'रास्तों पर भटकते हुए' में स्पष्ट सुनी जा सकती है। राष्ट्रीय समाचार–पत्र 'दैनिक भास्कर' ने प्रमुख रूप से इसे प्रकाशित किया, जिसका शीर्षक दिया 'दिव्य–दृष्टि : सात साल पहले निठारी'। स्पष्टतः लेखिका का लेखन वर्तमान समाज को प्रतिबिंबित करता है जिसका सशक्त प्रमाण स्वयं 'समय' ने दे दिया है। 'यानी कि एक बात थी', 'एक नीच ट्रैजेडी', 'एक स्त्री का विदागीत', 'चार दिन की जवानी तेरी', 'बीज', 'चिमगादडें', 'कोहरा और मछलियाँ', 'शब्दवेधी', 'नुक्कड़ तक', 'अब्दुल्ला', 'कैंसर' आदि ऐसी कहानियाँ हैं जिनके माध्यम से समकालीन परिवेश की विद्रूपताओं का संधान किया है। उनकी कहानियों में परिस्थितियों से जूझता व्यक्ति, पारिवारिक सम्बन्ध, उपभोक्तावादी संस्कृति, आधुनिकता एवं छद्म आधुनिकता, स्त्री–पीड़ा के स्वर, मानसिक तनाव और हताशा, सांस्कृतिक एवं वैश्विक चिन्तन की अभिव्यक्ति है।

लेखिका ने पत्रकारिता जगत् के अनुभवों को 'अपनी गवाही' उपन्यास में कृष्णा पात्र के माध्यम से उजागर किया है। यह उपन्यास समकालीन परिवेश में मीडिया की भूमिका को सत्य पटल पर प्रस्तुत करता है। "सत्तर के दशक में अंग्रेजी मीडिया में आए उफान में अंग्रेजी और उसके पत्रकार सातवें आसमान पर पहुँच गये जबकि भाषायी पत्र–पत्रिकाओं पर उनके मालिक कुण्डली मारे बैठे रहे– खासकर अब के दौर में मीडिया साम्राज्यों का संचालन करने वाले मालिक–सम्पादकों की फौज। पुरानी बिल्डिंग के अंधे और तंग दफतर से शुरूआत करने वाली कृष्णा नई बिल्डिंग के अंग्रेजी सम्पादकों और पत्रकारों के नाज–नखरों को कुछ ईर्ष्या से, कुछ क्रोध से और कुछ मजे लेकर देखती है। लगभग बेमतलब विषयों के रिपोर्टर से बढ़ते–बढ़ते एक राष्ट्रीय दैनिक की पहली महिला सम्पादक, देश के सबसे लोकप्रिय टी०वी० चैनलों में से एक की न्यूज एंकर बनने तक वह मीडिया के बदलते स्वरूप को बहुत पास से देखती है। वह देखती है कि राजनीतिक और आर्थिक फायदों की लड़ाई मीडिया के सहारे कैसे लड़ी जाती है, और वह पाती है कि इन अधिकांश मामलों में सच्चाई ही बलि चढ़ती है। समकालीन भारतीय परिदृश्य में सत्ता के पीछे भागनेवालों और दलालों की करतूतों के दिलचस्प और गुदगुदाने वाले विवरणों से

भरा यह उपन्यास अपनी सचबयानी और समाचार रिपोर्टिंग की चमक–दमक–भरी दुनिया की वास्तविकताओं पर केंद्रित है।"[1] लेखिका की दृष्टि से समकालीन परिवेश का कोई भी पक्ष छूट नहीं पाया है।

मृणाल पाण्डे के सम्पूर्ण लेखन में स्त्री–शक्ति का विस्तार देखा जा सकता है। इसका सबसे बड़ा कारण युगीन परिस्थितियों में था। चुपचाप इतिहास बन जाने वाली स्त्रियाँ पहली बार अपना इतिहास स्वयं लिख रही थीं। ये ही वे युगीन परिस्थितियाँ थी जिन्होंने मृणाल पाण्डे के साहित्यिक चिंतन को विकसित, पोषित और परिष्कृत किया और इन्हीं की अभिव्यक्ति उनके कथा–साहित्य में कभी वैचारिक चिन्तन को ऊर्जा देती है, कभी स्त्री– विमर्श पर मंथन करती है कहीं यथार्थ परिवेश को सपाट बयानी से व्यक्त करती है तो कहीं परंपरागत मान्यताओं में बदलाव के लिये सुगबुगाहट पैदा करती है। उनका उपन्यास 'देवी : समयातीत गाथाएँ स्त्रियों की', स्त्री–जीवन के संघर्ष तथा समाज में स्त्री की भूमिका को निर्धारित करता है। स्वाभाविक है कि पत्रकार की दृष्टि होने के कारण समकालीन समस्याओं, विड़म्बनाओं को देखने का, विश्लेषित करने का अपना एक अलग 'सार–सार को गही ले' वाला नजरिया उनके पास है इसीलिए दृष्टि सीधे मुद्दे पर जाती है, भटकती नहीं।

समग्रतः मृणाल पाण्डे का लेखन समकालीन सामाजिक परिदृश्य का सच्चा विश्लेषण प्रस्तुत करता है। इसके दो कारण हैं– प्रथम तो लेखिका का स्त्री होने के कारण स्त्री–संसार की पीड़ा एवं भावनाओं से सीधे–सीधे जुड़े होना, द्वितीय सम्पादक के रूप में समाज का प्रतिदिन लेखा–जोखा देने वाले राष्ट्रीय समाचार–पत्र तथा समसामयिक मुद्दों को उठाने वाली मासिक पत्रिकाओं से सम्बद्ध होना। समाज के प्रत्येक वर्ग से उनका वास्तविक–व्यावहारिक जुड़ाव है। मृणाल पाण्डे ने अपनी पुस्तक 'ओ उब्बीरी' में लिखा है, "मैं दो वर्षों से भी अधिक भटकती रही हूँ, स्त्रियों का दुःख बटोरते हुए, सरकारी नींद की बानगी लेते हुए ..... सैकड़ों

1 पाण्डे, मृणाल, अपनी गवाही, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली, सन्–2003, आवरण पृष्ठ से उद्धृत

औरतों की रामकहानियाँ चुपचाप सुनती चली गयी।"[1] लेखिका एवं पत्रकार होने के कारण उन्होंने छोटे–बड़े विषयों को गंभीरता से उठाया है। वे अपने पात्रों को जड़ पदार्थ मानकर छोटा नहीं बनातीं बल्कि संवेदना के स्तर पर उनसे जुड़ जाती हैं। यही कारण है कि समकालीन सामाजिक परिदृश्य में लेखिका का लेखन उन्हें हिन्दी कथा–साहित्य की प्रथम श्रेणी के रचनाकार के रूप में पूर्णतः प्रस्थापित करता है।

निष्कर्ष

रचनाकार की वैचारिकता की वास्तविक पकड़ उसके लेखन एवं कृतित्व से ही होती है। मृणाल पाण्डे की पकड़ भी उसके लेखन में निहित है। उनका लेखन गूँगा या मूक आत्मसमर्पण नहीं है अपितु उसमें आह्वान का स्वर भी है और आत्मशोधन का बोध भी। उन्होंने किसी एक समस्या या विचारधारा को लेकर नहीं लिखा बल्कि सृजनात्मकता में विविधता को समाहित किया है। उपन्यास 'विरुद्ध' (सन्–1977) और 'दरम्यान' (सन्–1978) कहानी–संग्रह से आरम्भ हुई उनकी लेखन यात्रा अनेक कृतियों के प्रस्तुतीकरण से गुजरती हुई वर्तमान सामाजिक सरोकारों का प्रतिफलन बनकर युगीन विड़म्बनाओं का आइना प्रस्तुत करती है। मृणाल पाण्डे ने पत्रकारिता तथा साहित्य दोनों ही क्षेत्रों में अपने सामयिक और प्रासंगिक लेखन द्वारा लेखकीय दायित्व का कुशलतापूर्वक निर्वाह किया है। कथाकार के साथ–साथ वह एक समीक्षक भी हैं। अतः उनकी चौकन्नी और सतेज अन्तर्दृष्टि जरा भी डगमगाती नहीं है। यही वजह है कि उनका लेखन लीक से हटकर पड़ता है।

--*-*-*

1 पाण्डे, मृणाल, ओ उब्बीरी..... भारतीय स्त्री का प्रजनन और यौन–जीवन, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा०लि०, नई दिल्ली, सन्–2003, पृ०सं०–12